Chap-5

5–अध्याय

सामाजिक सांस्कृतिक एवं पारिवारिक हास्य-व्यंग्य काव्य

5-अध्याय

सामाजिक सांस्कृतिक एवं पारिवारिक हास्य-व्यंग्य काव्य

1. सीधा सामाजिक परिवेश पर प्रहार - फैशन
2. पश्चिमोन्मुखी आचार-विचारों पर हास्य-व्यंग्य -पाश्चात्य सभ्यता
3. समाज में व्याप्त भ्रष्टाचार अनैतिकता, अन्याय सामाजिक भ्रष्टाचार
   व्यवस्था और पुलिस विभाग
   सरकारी विभाग
   न्याय व्यवस्था
4. सांस्कृतिक और समाज की विविध असंगतियों को लक्ष्य करके हास्य-व्यंग्य कविताओं का मूल्यांकन
   सांस्कृतिक मूल्यों का पतन
5. सामाजिक रुढ़ियाँ
   दहेज प्रथा
   फिल्मी व्यंग्य
6. पारिवारिक सम्बन्धों में विघटन
   सांस्कृतिक पारिवारिक मूल्य पतन
   पारिवारिक विघटन

5-अध्याय

सामाजिक सांस्कृतिक एवं पारिवारिक हास्य-व्यंग्य काव्य

सामाजिक एवं सांस्कृतिक मूल्य एवं साठोत्तरी हास्य व्यंग्य काव्य :

किसी भी राष्ट्र के साहित्य में हमें वहाँ के समाज की मान्यताएँ रीति-नीतियाँ, व्यवहार जीवन-मूल्य आदि के दर्शन होते हैं। भारत में एक जमाने में मानवता की पूजा होती थी मानवता को पैसा, पद और प्रभुता आदि से बड़ा माना जाता था। आधुनिक युग में मनुष्य की बौद्धिकता और स्वार्थ के सामने मानवता का कोई मूल्य नहीं रह गया है।

1960 के बाद देश की सामाजिक स्थिति दयनीय हो गई है। देश में गरीबी, बेकारी, महँगाई, भ्रष्टाचार, आर्थिक विषमता, साम्प्रदायिकता, आतंकवाद, अलगाववाद आदि कई समस्याएँ दिखाई देती है।

समाज की दयनीय स्थिति और हिन्दी गजलकारों की भूमिका के सम्बन्ध में विचार व्यक्त करते हुए डॉ. प्रतिमा सक्सेना ने लिखा है, मोहभंग से लेकर आज की बदलती हुई परिस्थितियों तक पूँजीवादी तबका खूब पनप रहा है। समाज में सामन्तवर्ग पूरी तरह से समाप्त नहीं हो पायाहै। वह पंचो, सरपंचो, भूमिपतियों, बड़े जोतदारों, छोटे-बड़े नेताओं और दलालों के रूप में आज भी विधमान है। शोषण कम होने के बजाय बढ़ता ही जा रहा है। देश के आम आदमी की दयनीय स्थितियों और त्रासदियों के लिए उत्तरदायी ताकतों के उद्देश्यों को बेनकाब करना, जनता में आत्मविश्वास तथा एक व्यापक आन्दोलन की सक्रिय भूमि तैयार करने में सहयोग देना आज के साहित्यकारों ने समाज की बदलती परिस्थितियों को उजागर करने का दायित्व निभाया है। 1

साहित्य में हास्य-और व्यंग्य का सम्पूर्ण दृष्यपटल रचनाकार का अपना

सामाजिक परिवेश ही होता है। वह अपनी व्यक्तिगत धारणाओं में समिष्ट के स्वरूप का चित्रण भी करता है, और अपनी सोच के मानदण्डो पर उसे मूल्यांकित करता है।जैसा कि विविध पृष्ठों पर स्पष्ट किया जा चुका है। कि हास्य में रचनाकार केवल सतही मनोरंजन प्रस्तुत करने का प्रयास करता है। इसमें विलोम कथ्य उक्ति वैशिष्टय असंगत कथ्य और अभद्र कथ्य तक की समनिषिति होती है। इस तरह हास्यकथ्य की विद्रूपताओं के साथ वाचक को या श्रोता को छणिक रूप में अह्लंक्षित या उद्घेलित करते हैं।

जब कि व्यंग्य में प्रस्तुत कथ्यान्तरगत किसी विशिष्ट गम्भीर सोच को या विचार को उपहासासपद ढ़ंग से व्यक्त किया जाता है। इसमें रनचाकार अभीष्ट तथ्य को इंगित कर उसे समालोचित करता है समीक्षित करता है और उसकी विद्रूपताओं को उजागर करता है इसमें कटु प्रहार आक्षेप अभियोग और भर्सत्ना आदि का समावेश रहता है।

प्रस्तुत इन्हीं मानदण्डों पर सामाजिक एवं सांस्कृतिक परिवेश में व्याप्त विविध तथ्यों को व्यंग्यकारों की दृष्टि से व्याख्यायित करने का प्रयत्न करेंगे।

1. सीधा सामाजिक परिवेश पर प्रहार :- साहित्यकार संवेदनशील प्राणी होता है। उसके चारों तरफ व्याप्त वातावरण में अनेंक विसंगतियों का जो समावेश होता है। समाज में विसंगतियों और विरोधाभासों का होना स्वाभाविक है। इन से प्रभावित होकर समाज की बदलती हुई परिस्थितियों पर तीक्ष्ण प्रहार करता है। यदि व्यंग्यकार इन विसंगितयों को उजागर न करें तो किसी का इस तरफ ध्यान नहीं जाएगा। और विसंगतियाँ लगातार बढ़ती जायेगी।

डॉ. हजारी प्रसाद द्विवेदी का यह कथन इस बात की पुष्टि करता है, सच्चा व्यंग्यकार समाज की कुरीतियों को सही रूप में देखता है और अपने व्यंग्यबाण से उसे भेदता रहता है, उसका उद्देश्य समाज का परिशोधन होता है। 2

1. फैशन : भारतीय सभ्यता के अन्तर्गत रहन-सहन, खान-पान, वेषभूषा, आचार, विचार आदि आते है। किन्तु काका हाथरसी ने समाज के बदलते हुए वेश-भूषा और परिधान को पाश्चात्य सभ्यता की तरफ आकर्षित होते देखकर। युवा पीढ़ी के बदलते रूप उनकी फैशन पर व्यंग्य किया है। काका ने आधुनिक समाज में व्याप्त फैशन की आँधी पर, जिमसें समाज उजड़ा जा रहा है इस पर करारे व्यंग्य किये है अपनी महान् सांस्कृतिक परम्परा को छोड़कर आज लोग पाश्चात्य सभ्यता के रंग में

डूबे हैं, इस पर काका हाथरसी ने तीखा व्यंग्य प्रहार किया है -

'काका' या संसार में, व्यर्थ भैंस अरू गाय
मिल्क पाउडर डालकर, पी लिप्टन की चाय।
पी लिप्टन की चाय, साहबी ठाठ बनाओ,
सिंगल रोटी छोड़, डबल रोटी तुम खाओ।
कहाँ काका कविराय, पैंट के घुस जा अन्दर,
देशी बाना छोड़, बनो अंग्रेजी बन्दर। 3

आधुनिक युग में फैशन का दौर तेजी से बढ़ रहा है। फैशन का नया दौर व्यक्ति को बदलने की ओर प्रेरित करता है। आज कल अनेंक प्रकार के पदार्थ बाल रगंने के लिए आ गये हैं, आज की बदलती हुई सभ्यता और फैशन पर कवि काका हाथरसी ने व्यंग्य किया है -

मूछों में आ जाय, जब कोई भूराबाल,
खींच लीजिए पकड़कर, चिमटी से तत्काल।
चिमची से तत्काल, आयु इससे बढ़ जावे,
सदा जवानी रहे, बुढ़ापा पास न आवे।
कहँ काका बढ़ जाय सफेदी का जब हिस्सा
ले खिजाब अरु, बुरश, दनादन मारो घिस्सा। 4

समाज में अंग्रेजी सभ्यता उनके रहन-सहन, फैशन पर अत्यधिक प्रभाव पड़ रहा है। काका कवि ने रंगे हुए होठ और पाश्चात्य फैशन का अनुसरण करने वाली युवाओं पर व्यंग्य किया है-

मृगनैनी छैनी बनी, पहुँची नैनीताल,
होठो पर सुर्खो दई, रंग लीने दोऊ, गाल।
रंग लीने दोऊ गाल, थाप को दीना लटला,
सिर से साड़ी हटा, बगल में लीना पिल्ला।
कहँ काका कविराय, चाल में आई तेजी,
मेम बनी गई देवीजी, पढ़के अँगरेजी। 5

आज की युवा पीढ़ी को पाश्चात्य फैशन का पूरा रंग चढ़ गया है। अंग्रेजी भाषा और संस्कृति भारत देश में पूरी तरह हावी हो गयी है। इस संदर्भ में काकाहाथरसी ने व्यंग्य की सूक्ष्म दृष्टि डाली हैं-

न्यू फैशन की लूट है, लूट सके तो लूट,
अन्तकाल पछताएगा, प्राण जाएगे छूट।
प्राण जायेंगे छूट, धूल अक्ल की झाड़ों।
तंग सिलाओं सूट, पुराने फेको फाड़ो।
कहाँ 'काका' फ़ैशन सरिता ने बहना सीखों। 6

काका ने समाज में बढ़ती हुई फैशन पर व्यंग्य किया है कि आधुनिक युग में फिल्मों में पाश्चात्य फ़ैशन का अत्यधिक प्रभाव पड़ रहा है। फिल्म स्टार अपने फ़ैशन को महत्व देती है। उन्हें समाज के नियम कानून से कोई लेना-देना नहीं है-

मेकप करके कारमें, चली फिल्मस्टार,
हाथ दे रही इधर को, उधर चलाती कार।
उधर चलाती कार, सिपाही बोला- 'मैड़म',
कर दूँगा चालान, गलत क्यों चलती हो तुम?
दिशा ज्ञान को हाथ नहीं मै दिखा रही हूँ।
जरा नेल-पालिश गीली है, सुखा रही हूँ। 7

आधुनिक युग में पाश्चात्य फ़ैशन का भारतीय नारियों पर अत्यधिक प्रभाव पड़ गया है। आज के मेकअप से बुढ़िया जवान दिखने लगती है। फ़ैशन के बढ़ते दौर में कवि काका हाथरसी ने व्यंग्य किया है -

काकी को हम इसलिये नहीं सा थ ले जाएँ,
बस में अथवा रेल में, यात्री आँख लड़ायें।
यात्री आँख लड़ायें, करे हम नीची मूँछे,
उसका आदर होय, हमें नहि कोई पूछे
यद्यपि घरके भीतर वह लगती है बुढ़िया,
मेकप करके फर्स्टक्लास बन जाती गुड़ियां। 8

युगीन परिवेश दिन पर दिन बदलता जा रहा है। जीवन में मूल्य बदलते जा रहे है। पाश्चात्य प्रभाव के कारण पहनावा छोटा होता जा रहा है। इस सम्बन्ध में काका हाथरसी का व्यंग्य देखिए -

महँगाई से तंग हैं, कपड़े पहने तंग,
आगे चलकर रहोगे, बिल्कुल नंग-धडंग। 9

आधुनिक युग में फ़ैशन का दौर जोरो पर है। फ़ैशन के इस दौर में लोगों ने

प्रकृति को भी नहीं छोड़ा है। शादियों और अवसरो पर बाग-बगीचे उजड़ जाते है। फूलों से सजावट की जाती है। और बालों में लगाये जाते हैं-

लाली के जूड़े-चढ़े फूल-फूल मुसकाय,
डाली पर हो बोरियत, सूख-सूख मुरझाय। 10

काका हाथरसी ने हास्य-व्यंग्य साहित्य के द्वारा समाज में होने वाले परिवर्तनों को व्याख्यायित किया है - आज के नये फ़ैशन के दौर में नारी, नर से पीछे नहीं है फ़ैशन और पाश्चात्य संस्कृति को अपनाने वाले व्यक्ति स्टैण्डर्ड के समझे जाते है।

चटख जाय ईर्ष्या से दर्पण,
मानव की तो क्या गिनती है।
ऐसे नर को पाकर नारी,
प्रसन्नता से सिर धुनती है।
नयू फैशन के टीले पर चढ़कर दिलीप कट बाल खाओ।
कुछ तो स्टैण्डर्ड बनाओ। 11

आधुनिक युवा पीढ़ी पाश्चात्य सभ्यता की तरफ अत्यधिक आकर्षित हो रही है उसी को अपना पसन्द करती है। जो फ़ैशन के दौर में चल रहा है। युवा पीढ़ी की सोच है कि वे पाश्चात्य पोशाक पहनने पर सुन्दर दिखेगें। और इस तरीके की पोशाक पहनते हैं जो समाज के लिये अभिशाप है। इस आधुनिक फ़ैशन पर डॉ. गोपाल बाबूशर्मा ने कुछ पंक्तियाँ प्रस्तुत की है-

नारी इस संसार में सुन्दरता की खान,
सफल देह सांचेढली अद्भूद और महान,
अद्भूद और महान, सृष्टि यह विधि की न्यारी
इसे छिपाने का अपराध करें क्यों नारी,
सफल प्रदर्शन हो विधि के रचना-कौशल का, इसलिए पोशाक तंग है, कपड़ा हल्का। 12

समाजिक परिवेश में अंग्रेजी संस्कृति पूरी तरह से हावी हो गयी है। जिधर दृष्टि डाली जाती है। उधर, फ़ैशन ही दिखाई देती है। रंगे पुते हुए चेहरें दिखाई देते है। फ़ैशन-परस्ती के पीछे युवा पीढ़ी अपनी संस्कृति, सिद्धांत खों चुकी है। चारों तरफ रँगी-पुती हुई नारियाँ दिखाई देती है। इस फ़ैशन को देखकर कवि मूलचन्द शर्मा नादान ने व्यग्य किया है -

चोटी नहीं बिखरे-बिखरे बाल काहू झाड़ी जैसे,
थूथड़े पै पौडर ज्यों भभूत में भभूतनी।
काजर ते कारी-कारी आंख है लकीर वारी,
कानों पहनें कुण्डला ज्यों पहनें अवधूतनी।
कृष्ण ने जो मारी थी वो राक्षसी पूतना थी,
पूतना की बाप हैं ये पूतना की पूतनी।
सुबह-सुबह इन्हें बिना मेकअप कोई देख लेय,
ऐसौ लगै देखीकोई आज हमने भूतनी॥ 13

2. पश्चिमोन्मुखी आचार-विचारों पर हास्य-व्यंग्य :

पाश्तात्य सभ्यता : स्वाधीनता से पूर्व देश में स्वदेशी भाषा। स्वदेशीमाल और भारतीय संस्कृति के अनुरूप सामाजिक व्यवहार अपनाने का संकल्प लिया है। विदेशी मालों का बहिष्कार करके जगह-जगह विदेशी मालों की होली जलायी गयी थी। और भारतीय संस्कृति के अनुरूप सादा रहन-सहन विचारों को धारण किया गया। परन्तु आधुनिक युग में विदेशी फ़ैशन, विदेशी माल का प्रयोग करके समृद्धि और वैभव का प्रदर्शन, पाश्चात्य जंगत का स्वच्छन्द यौनचार और अशिष्ट, अमर्यादित व्यवहार प्रदर्शन करके आधुनिक बनने का शौक चर्मोत्कर्ष सीमा पर है। भारतीय संस्कृति और मूल्यों का पतन होता जा रहा है। समाज की चिन्ता करते हुए कवियों ने व्यंग्य वाणी के स्वर प्रस्फुटित किये हैं-

समाज में मनुष्य को पूर्णरुपेण पाश्चात्य सभ्यता का प्रभाव पड़ रहा है। व्यक्ति दिखने में कैसे भीलगे विदेशी नकल ही करते है। समाज के बदलते हुए परिवेश पर कवि काका हाथरसी ने व्यंग्य किया है -

जिस दफ्तर में जाइए क्लर्की का सब झुंड,
मैनेजर साहब सहित, मिले तुम्हें मुँछमुंड।
मिले तुम्हें मुछमंड, किसी ने ऐसी रक्खी।
करती हो मीटिंग नाक के नीचे मक्खी।
कहँ काका कविराय, राज अँगरेज दे गए,
इसके बदले मूँछ हमारी मूड़ ले गए। 14

भारतीय समाज में जब से अंग्रोजी युग का आरम्भ हुआ है। मनुष्य के रहन-सहन, खाने-पीने सभी में बदलाव आ गया है। समाज के सभी नियम बदलते जा रहे

है। सामाजिक परिवेश को देखकर ऐसा लगता है। कि भारत में अंग्रेजी युग का प्रारम्भ हो गया है। इस संदर्भ में काका हाथरसी ने व्यग्य की अभिव्यक्ति की है-

जग रूठे रुठा करे, मत छोड़ो निज टेक,
पिल्ला पालो प्रेम से, खाओ बिस्कुट-केक।
खाओ बिस्कुट केक, मूँछ की करो सफाई,
कोट-पैंट लो डाट, गले लटकाओ टाई।
कहँ काका कविराय, काम यह सबसे सच्चा,
बिना पढ़े ही बन जाओ साहब के बच्चा। 15

भारतीय समाज में अंग्रेजीयत के रंग को देखकर काका कवि ने व्यंग्यायित किया है। आधुनिक युग में लड़की और लड़कें की पहचान करना मुश्किल हो गया है।

लड़के लंबे बाल बढ़ाएँ, केस कटाती है कन्याएँ,
बेटे ब्लाउज पहिन रहे हैं, बिटिया जी लुंगो लटकाएँ.
धोखे में पड़ जाते काका को छोरा को छोरियाँ?
गणपति बप्पा... 16

पाश्चात्य सभ्यता की तरफ आकर्षित होकर आधुनिक पीढ़ी फ़ैशन के दौर में बहुत आगे निकल गई है। आज के युवाओं को कोई भी वेशभूषा अच्छा या बुरा नहीं लगता है। मानव जीवन का रंग-ढ़ंग मूल्य सभी परिर्वतित होते जा रहे है। काका हाथरसी ने व्यंग्य पंक्तियों द्वारा स्पष्ट किया है -

आदिकाल से चल रही, परंम्परा प्राचीन,
मूँछ मर्द के दीखती, महिला मुखड़ा क्लीन।
महिला मुखड़ा क्लीन, मूँछ नित साफ कराएँ,
आश्चर्य है इतने पर भी मर्द कहलाएँ।
दाढ़ी-मूछों वालों को ही मर्द जानिए।
बाकी-सबको पूर्वजन्म की नारि मानिये। 17

परिवर्तन शाश्वत है। प्रकृति में प्रतिक्षण परिवर्तन होते रहते हैं। समाज इसका प्रत्यक्ष उदाहरण है। समाज को देखने पर हम समझ सकते है कि दिन पर दिन पाश्चात्य संस्कृति का प्रभाव बढ़ता जा रहा है। लड़कें और लड़कियों का पहनावा बदल गया है। इस पर काका हाथरसी का व्यंग्य द्रष्टव्य है।

बाबू बाँधे साड़ियाँ, बीबी पहिने पैंट,

बीबी जी अफसर बने, बाबू जी सरवैंट। 18

आधुनिक युग के युवा वर्ग के सहन-सहन, पहनावे में पूर्णरूप से पाश्चात्य रंग चढ़ गया है। इस सम्बन्ध में काका की व्यंग्य पंक्तियाँ प्रस्तुत है-

महंगाई से तंग हैं, कपड़े पहनों तंग,
आगे चलकर रहोगे, बिल्कुल नंग-धडंग। 19

आधुनिक युग की युवा पीढ़ी फिल्मों को अधिक महत्व देती है। फिल्मों के द्वारा पाश्चात्य सभ्यता का प्रचार बढ़ रहा है। आज की युवा पीढ़ी फ़ैशन के दौर में आगे ही बढ़ती जा रही है। आज की पीढ़ी को कपड़े पहनते समय समाज की कोई परवाह नहीं होती है। उन्हें सिर्फ पाश्चात्य फ़ैशन का रंग चढ़ा है। इस बदलते हुए परिवेश को काका हाथरसी ने व्यंग्य किया है -

लाल लिपिस्टिकत लगाकर, होठ चलाती होय,
लाल मिर्च दो लड़ रही, ऐसा दीखा मोय।
नगर पालिका कार्य भी, कुछ हलका पड़ जाए
इस फ़ैशन की कृपा से,, सड़क मुफ्त झड़ जाये। 20

भारत देश से अंग्रेज भारतीयों को स्वतंत्र करके चले गये। परन्तु अपनी संस्कृति और सभ्यता के गुलाम बना गये। भारतीय पाश्चात्य सभ्यता को अपनाये बिना जीवन अधूरा समझते है। सभीके ऊपर पाश्चात्य सभ्यता का रंग चढ़ गया है। पाश्चात्य सभ्यता के रंग में रंगे युवाओं पर काका हाथरसी ने व्यंग्य किया है-

और देश सब छोड़िए, अपना भारत देश,
उसको कहता 'सुकेशी', जिसके लंबे केश।
जिसके लंबे केश, राज अँगरेजी आया,
बीबी के बालों का सत्यानाश कराया।
चली बॉबकट फ़ैशन तो अपना दिल धड़का,
कैसे पहिचाने यह लड़की है या लड़का?
फ़ैशन की आधी चली, क्या होगा करतार
बुढ़िाय भी रखने लगी, जुल्फें छल्लेदार। 21

आधुनिक युग की युवा पीढ़ी का रहन-सहन, खान-पान, पाश्चात्य सभ्यता की तरफ आकर्षित होता जा रहा है। पश्चिमी तौर-तरीके, रंग-ढ़ंग आदि को देखकर आज के युवा खुश हो जाते है और उसी का अनुसरण करते है। इस संदर्भ में काका

हाथरसी ने व्यंग्य किया है -

देख पश्चिमी सभ्यता, मन में उठी उमंग,
नई-नई फ़ैशन दिखी, छैला बदलें रगं.
छैला बदले रंग, जमाना आया कैसा,
लड़का है, लेकिन लगता है लड़की जैसा।
स्लीवलैस बुश्शर्ट, बदन सै सटी हुई है
पेंट जीन्स की तीन जगह से फटी हुई है। 22

भारतीय समाज में पाश्चात्य संस्कृति का अत्यधिक प्रभाव पड़ा है। फिल्म जगत ने देश में पाश्चात्य सभ्यता का अत्यधिक प्रचार किया है। फिल्मी अभिनेत्री को देखकर कवि ने इनके पहनावे पर व्यंग्य किया है काका हाथरसी के अनुसार -

अर्धनग्न हो सुन्दरी
दर्शक के मन भाय,
उसे देखकर लाज भी हाय-हाय डकराय। 23

काकाहाथरसी ने फ़ैशन के बदलते हुए युग पर व्यंग्य किया है। फ़ैशन के बदलते दौर को देखकर कवि परेशान है वह आश्चर्य में पड़ गया है। उसे लड़की और लड़के में कोई फर्क समझ में नहीं आ रहा है।

न्यू फ़ैशन मैं खो गया,
काका-कवि का ज्ञान,
छोरी-छोरा-सा दिखे, छोरा छोरि समान। 24

आधुनिक युग में पाश्चात्य संस्कृति का पूर्ण समावेश हो गया है। फिल्म जगत को देखकर युवा पीढ़ी फ़ैशन की ओर अग्रसर है। काका ने अपने साहित्य के माध्यम से इस पर व्यंग्य किया है -

युवती सोलह साल की
कर सोलह श्रृंगार,
निकल जब बाजार में, लड़कें खायँ पछार। 25

आधुनिक युवा पीढ़ी के रहन-सहन पहनावे को देखकर कह सकते है कि फ़ैशन की कैसी होड़ लगी हूई है। आज की लड़कियां इतने छोटे कपड़े पहनती है। जिसे देखकर काका ने व्यंग्य पंक्तियाँ लिखी है-

सब वस्त्रों में चल रही, न्यू फैशन की चाल,

इसीलिए तो लड़कियां, रखे मिनी रूमाल।
रखें मिनीरूमाल , बड़े से है, यह खटका,
उसे बिछाकर लेट जायेगा कोई लड़का।
छोटा ब्लाउज, छोटी चोली, छोटी कुर्ती,
छोटी चीजों से शरीर में रहती फुर्ती। 26

इक्कीसववीं सदी के दौर को देखते हुए समाज के बदलते परिवेश को काकाहाथरसी ने व्यंग्यायित किया है। इस सदी में किसी लड़के और लड़की को पहचानना मुश्किल हो गया है -

कुछ दिन धीरज धारिए, छोड़ो तर्क-कुतर्क,
आए इक्कीसवी सदी साफ दिखेगा फर्क।
साफ दिखेगा फर्क, अक्ल को उलट दीजिये,
लड़की दीखे उसकोलड़का मान लीजिये।
ड्रेस देखकर ही मन में मत निर्णय करना,
भाई जैसा दिखे उसे तुम जानो बहना। 27

समाज में लड़की और लड़के में कोई फर्क नहीं रहा है। लड़के बड़े बाल रखते हैं और लड़कियाँ बाल कटाती है। इस फ़ैशन के बदलते हुए परिवेश पर काका की व्यंग्य पंक्तियाँ इस प्रकार है -

हिप्पी टाइप बाल है,
बैल बाटँमी पैंट,
लल्ली जैसे लग रहे,
लल्ला सैंट परसैंट। 28

भारतीय समाज में नारी फ़ैशन के दौर में सबसे आगे है। आधुनिक नारी सामाजिक नियम मूल्य भूलकर पाश्चात्य सभ्यता की तरफ अधिक आकर्षित है। आधुनिक नारी की साज-सज्ञा के ऊपर काका कवि का व्यंग्य तीव्र गति से मुखरित हो उठा है :

पहन मिनी पोषाक, बनावे ऐसे जूड़े,
युवक सिसकिया भरें, हिचकिया लेंते बूढ़े। 29

आधुनिक युग की लड़कियों की पोषाक पर कवि ने व्यंग्य किया है कि युवा वर्ग की लड़कियाँ ऐसी पोशाक पहनने लगी है कि उन्हें घुड़सवारी करना है। उनका

पहनावा और फ़ैशन पाश्चात्य संस्कृति की देन है -

घोड़े पर भी चढ़ सके, पहन चुस्त पतलून,
खून बदन में हो न हो, लम्बे हो नाखून। 30

आज की युवा पीढ़ी अपनी भारतीय संस्कृति को भूलकर पाश्चात्य सभ्यता का अनुसरण कर रही है पूरी तरह पाश्चात्य रंग में रंग गयी है। अपनी संस्कृति और सभ्यता को भूलने वाली युवा पीढ़ी पर काका ने व्यंग्य द्वारा अभिव्यक्ति की है -

भूल गए निज सभ्यता, बदल गया परिधान,
पाश्चात्य रँग में रँगी भारतीय संतान।
भारतीय संतान रो रही माता हिंदी,
आज सुहागिन नारि लगाना भूली बिंदी।
कहँ काका कवि, बोलो बच्चों डैडी-मम्मी,
माता और पिता कहने की प्रथा निकम्मी। 31

आधुनिक समाज के सभी व्यक्ति नर-नारी पाश्चात्य संस्कृति को अपनाना अपना धर्म समझने लगें है। आज के नर भी अपनी संस्कृति भूलकर पाश्चात्य सांस्कृति को अपनाते हैं इस पर काका ने व्यंग्य लिखा है -

ऊँची-नीची मूँछ हों, नहीं करें जब मैच,
संड़े-की संड़े करो, कैची से पर कैंच।
कैची से परकैंच, भले ही हाफ करा दो,
देवी जी कह दे तो बिल्कुल साफ़ करा दो,
कहाँ, 'काका' अरजैंट आर्डर उनका जानो,
व्यास वचन है- 'पत्नी को परमेश्वर मानो,' 32

आधुनिक सामाजिक परिवेश में चाय शिष्टाचार का प्रतीक बन गई है। चाय का प्रयोग सभी वर्गी में समान रूप से प्रचलित है। कवि काका हाथरसी ने चाय की तुलना गंगाजल के समान सर्वव्यापी बताया है। चाय बीसवीं सदी का अमृत हैं। आधुनिक समाज में रेलवे स्टेशनों पर रेल यात्रा में सभी स्थानों पर चाय का मिलना मुश्किल नहीं है।

एकहि साधे सन सधे, सब साधे सब जाय,
दूध, दही, फल, अन्न, जल, छोड़ पीजिए चाय।
छोड़ पीजिए चाय, अमृत बीसवीं सदी का,

जग-प्रसिद्ध जैसे, गंगाजल गंग नदी का।
कहँ काका इन उपदेशों का अर्थ जानिए,
बिना चाय के मानव-जीवन व्यर्थ मानिए। 33

आज की सभ्यता, संस्कृति को बदलते देखकर काका कवि ने व्यंग्य द्वारा कटाक्ष किया है। आज के युग में धनाड्य व्यक्तियाँ के कुत्ते भी गरीब मनुष्यों से अच्छा जीवन व्यतीत कर रह हैं। गरीबी के कारण मनुष्य का जीवन पशु से भी तुच्छ है। इससे आज की मानवता का तिरस्कार हो रहा है -

पिल्ला बैठाकार में, मानुष ढोवें बोझ,
भेद न इसका मिल सका, बहुत लगाई खोज।
बहुत लगाई खोज,रोज साबुन से न्हाता,
देवीजी के हाथ, दूध से रोटी खाता।
कहँ काका कविराय, चाल में आई तेजी
मेमे बन गई देवीजी, पढ़के अँगरेजी। 34

आधुनिक युग में भारतीय संस्कृति का लोप हो गया है। फिल्मों के द्वारा पाश्चात्य सभ्यता पूरे देश में फैल गई है। जैसा फिल्म में हीरो-हिरोइन करते है वैसा हीयुवा पीढ़ी करनें का प्रयास करने लगी है। इस सम्बन्ध में काका हाथरसी ने लिखा है :

हीरोइन ने मार दी, हीरो जी को आँख,
बिना छुरी के हो गई, दिल की बारह फाँक।
दिलकी बारह फाँक, कि जैसे हो खरबूजा,
घायल हूँ, फिर भी कर सकता तेरी पूजा।
अब या तो स्वीकार प्यार कर ले तू मेरा,
वरन् खुदकुशी करूँ नाम ले दूँगा तेरा। 35

भारत में पाश्चात्य सभ्यता का पूर्ण समावेश हो गया है। आज की युवा पीढ़ी लड़के-लड़कियाँ फिल्मों को देखकर पाश्चात्य सभ्यता फ़ैशन का अनुसरण करते है। लड़कियाँ, लड़कों से पीछे नहीं है। इस संदर्भ में काका हाथरसी ने लिख है -

छेड़छाड़ में कम नहीं, लड़का-लड़की कोय,
जिसकी छेड़न तेज हो, जीत उसी की होय।
जीत उसी की होय, मार्ग में लड़का इकला,

छात्राओं का एक झूंड कॉलिज से निकला।
लल्ला भोलानाथ, लड़कियाँ थी चुल बुल्लू।
धक्का देकर बना दिया लल्लू को उल्लू। 36

काका कवि ने समाज की आधुनिकता पर व्यंग्य किया है। आज की नारी किसी से पीछे नहीं रही है। द्वापर में द्रौपदी के बाल खुलने पर वह कुछ नहीं बोल पायी। परन्तु आज की नारी को हाथ लगाना मुश्किल है।

द्वापर में जब द्रौपदी ने खोले थे केश
कौरव-पांडव युद्ध में, फँसा हमारा देश
फँसा हमारे देश, फर्क है केश-केश में
पहिले जैसी नहीं द्रौपदी आज देश में
छुए कोई बाल, नहीं साधेगी चुप्पी।
तुरत फोड़ दें दुःशासन के सिर की कुप्पी। 37

आधुनिक युग में अनेक विकृतियों और विसंगतियों का समावेश हो गया है। पहले के युग में लोग भारतीय संस्कृति को अपनाना अपना धर्म समझते थे परन्तु आधुनिक युग में पाश्चात्य सभ्यता का अनुसरण करना अपनी महानता समझते हैं -

ऋषि मुनि जंगल में रहें, कंद-मूल-फल खायँ।
हिप्पी घूमे शहर में, हिस्की-चरम उराये। 38

आज की युवा पीढ़ी फिल्मों की तरफ इतनी आकर्षित हो गयी है। कि आज का पैदा हुआ बच्चा पाश्चात्य संस्कृति में पल रहे है। पाश्चात्य संस्कृति के फैलते रूप पर कवि ने व्यंग्य किया है -

हँसना रोना खो जाएगा इक दिन ऐसा आएगा,
पैदा होते-होते बच्चा फिल्मी गीत सुनाएगा। 39

आधुनिक युग में सांस्कृतिक मूल्यों का पतन होता जा रहा है। युवा पीढ़ी को फ़ैशन में घूमना खाना पसन्द है। पाश्चात्य संस्कृति को अपनाकर उन्नति समझते है। भारतीय मूल्यों के पतन को देखकर कवि काका हाथरसी ने व्यंग्य किया है -

चलते-चलते मेन रोड पर,
फिल्मी गाने गा सकते हों,
चौराहे पर खड़े-खड़े तुम,
चाट-पकौड़ी खा सकते हो।

बढ़े चलो उन्नति के पथ पर,
रोक सके किसका बलबूता?
यों प्रसिद्ध हो जाओ जैसे,
भारत में बाटा का जूता। 40

आधुनिक युग की नारी भारतीय संस्कृति को भूल गयी है। और पाश्चात्य संस्कृति को अपनाना अपना धर्म समझती है। आज की नारी की आधुनिकता पर काका कवि ने व्यंग्य किया है -

नारी जागरण की
स्थिति शहरों में
क्या नज़र आयी?
सभ्यता पश्चिमी
इस कदर छायी-
कल पति वो था,
आज पति वह है।
आने वाले कल का
कौन क्या होगा,
कैसे कहें भाई? 41

भारतीय समाज में पाश्चात्य संस्कृति का रंग पूरी तरह से चढ़ गया है। आधुनिक युग में भारत का बच्चा पाश्चात्य संस्कृति में ही पैदा होता है। उसे भारतीय संस्कृति देखने को भी नहीं मिलती है। कवि राजीव सक्सेना ने समाज की विकृतियों से क्षुब्ध होकर समाज -सुधार की प्रेरणा हेतु व्यंग्य किया है -

प्रातःकाल जब एक बच्चा,
अपने पिता के साथ स्कूल से घर आया।
तो माँ ने पूछा बेटा आज छुट्टी थी,
वह बौला, नहीं आज हाँलीडे था।
यह देख हमें रोना आया,
वाह री पाश्चात्यता कितना अंतर सिखाया।
रोजी की लालसा ने सभी को भुलाया,
बच्चे को माँ और मातृभाषा से दूर

बहुत दूर कर दिया। 42

सामाजिक परिवेश को बदलते हुए देखकर सामाजिक जीवन के यथार्थ एवं विसंगतियों पर कवि सम्राट ने व्यंग्य द्वारा प्रहार किया है। हमारे देखते हुए समाज में अनेक परिवर्तन होते जा रहे है। आज के इन्सान कुछ भी करने को तैयार रहते है। उन्हें भगवान का भी डर नहीं होता है। ऐसा लगता है मानो आज के सिनेमा घर भारतीय समाज को पतन की ओर ले जायेगे।

निगाह के सामने ही देखिए बदलावतें अपनी,
बढ़ी रिश्वत है बेहद ईमानदारी जर कमाने में।
'हकीम' अब क्या कहे, पैसे की ताकत की हिमाकत पर,
खुदा के खौफ से डरता नहीं कोई जाने में।
न धर्मी कर्म है, पोथी-पुराणों की नहीं इज्जत,
अदब, तहजीब, गायब, रह गया है क्या उठाने को।
बुजुर्गो को ये तिफलाने, वतन जाहिल समझते हैं.
सिनेमा लेके डूबेगा, हलीम अब इस जमाने को। 43

आधुनिक युग की बदलती हुई परिस्थियों को देखकर कवि ले. सम्राट ने व्यंग्य किया है। आज हमारी युवा पीढ़ी पाश्चात्य संस्कृति की ओर बढ़ रही है। जिससे समाज में अनेंक विकृतियों का समावेश हो गया है। आज की युवा पीढ़ी सिनेमा घरों में जाकर फिल्मों को देखते हैं। और वहाँ की बुराइयों पाश्चात्य सभ्यता का अनुसरण कर रही है। भारत की बदलती हुई संस्कृति पर यथार्थ चित्रण किया गया है -

देख सुनकर भी हम अंधे और बहरे हो रहे,
जो रही किस ओर हैं ये अपनी सबकी पीढ़ियाँ।
जेब कतरी, चोरी और डाके की तरकीबें हकीम।
सब सिखाती है सिनेमा शो की सचमुच सीढ़ियाँ,
छूटते ही क्या कहे स्कूल से इकदम हकीम
सर पै रहती है सिनेमा देखने की दुन सवार
खाना पीना भूल तिपलाने वतन को देखिए,
किस कदर का बढ़ रहा है उनमें अब पिक्चर का प्यार।
कोश गाने उड़ रहे उनकी जुबां से जोश में,
होश के रहते हुए भी गा रहे हैं फूल में,

देश को ले जाएंगे किस ओर अब ये सब हकीम,

वे ही समझें या खुदा, पढ़ते हैं क्या स्कूल में। 44

आज की युवा पीढ़ी अपने को आधुनिक कहने में गर्व का अनुभव करती है। अंग्रेजी भाषा वहाँ की सभ्यता के प्रचार-प्रसार से आज के युवकों में यह भावना पेदा हो गयी है। कि वे अंग्रेजी सभ्यता को ही सर्वश्रेष्ठ मानते है - आज के युवाओं की तरक्की पर कवि जय कुमार रुसवा ने व्यंग्य किया है-

सच पूछो तो
हम भारतीयों ने
यह
तरक्की की
कि अपनी
सभ्यता से ज्यादा
पराई
सभ्यता में
रुचि ली। 45

भारतीय सिनेमा समाज में पाश्चात्य संस्कृति को बढ़ावा दे रही है। आज के युवा पश्चिमी सभ्यता की छाप लेकर घरों में लौटते हैं और पाश्चात्य संस्कृति को अपनाते है। चाहे वह समाज में मान्य हो या न हो। इस संदर्भ में कवि मधुप पांडेय का व्यंग्य प्रस्तुत है -

डब्बू मिल्स के
माडर्न स्टाइल के कपड़े
पहनिए-पहनाइए
आज ही ले जाइए
बहुत दिन टिकते है
जो अंगा छुपाने चाहिए
इन कपड़ों में वे साफ दिखते है। 46

भारतदेश की संस्कृति लुप्त होती जा रही है। हमारी संस्कृति के जो हमारे मूल्य थे सभी नष्ट हो गये है। समाज में आपसी व्यवहार भाईचारा, प्रेम सब खत्म हो गया है। समाज के टूटते हुए मुल्यों परकवि मधुप पांड्येय ने व्यंग्य किया है-

हमें हर्ष है -
कि हमारे मूल्यों में
बेहद उत्कर्ष है
देखिए न
डाक्टर की नजर में
मरीज नहीं
मरीज का पर्स है
और मरीज की नजर में
डाक्टर नहीं
डाक्टर के साथ वाली
खुबसूरत नर्स है। 47

भारतीय समाज़ में आधुनिकता के नाम पर अनेंक विकृतियाँ फैल गयीं है। भारतीय संस्कृति और भाषा को सभी भूल गये हैं। अंग्रेजी भाषा और सभ्यता को अपनाने में अपनी महानता समझते है। अंग्रेजी भाषा का मोह अभी भी भारत को जकड़े हुए है। भारत में अंग्रेजी का रंग ऐसा चढ़ गया है कि वाद-विवाद हिन्दी में न होकर अंग्रेजी में होते है। आज भारतदेश मेंचारों तरफ अँग्रेजी का सम्मान हो रहा है। इस सम्बन्ध में कवि डॉ. रामप्रसाद मिश्र ने व्यंग्य की अभिव्यक्ति की है -

तेरे भक्तों को हिन्दी, में मिलती नहीं खानी
शब्दों को उधार ले-ले उर्दू ने कीर्ति बरवानी।
एंग्लो-इंडियन भाई-कहते, तू भारत की वाणी,
अडगम-बड़गम-कड़गम कहते, तू महान कल्याणी।
अंकल, आँटी, मम्मी, डैडी तक है व्याप्त कहानी,
पब्लिक स्कूलों से संसद, तक तूने महिमा तानी।
अँग्रेजी में गाली देने तक में ठसक बढ़ानी,
फिर, भाषण में क्यों न लगे सब भक्तों की सिम्फॉनी।
मैनर से बैनर, पिओन से लीडर तक लासानी,
सभी दंडवत् करते तुझको, तू समृद्धि सुख-दानी। 48

आधुनिक युग में युवा पीढ़ी संस्कृति को खोती जा रही है। पाश्चात्य सभ्यता तो अपनाकर अपने को धन्य समझती है इस बदलते परिवेश पर कवि अदित्य शर्मा

की व्यंग्य पंक्तियाँ द्रष्टव्य है -

लम्बे बाल कान में बाली, दाढ़ी मूँछे साफ दिखी
मैने पूछा शी हो या ही, शर्म नहीं तुमको आती। 49

कविप्रेम किशोर पटाखा में समाज में परिवर्तन को देखकर व्यंग्य किया है। आज की युवा पीढ़ी हिन्दुस्तान में रह रही है खा रही है। परन्तु उसके विचार, रहन-सहन पाश्चात्य संस्कृति की तरफ आकर्षित हो गयी है। आज की इक्कीसवीं सदी में होने वाले परिवर्तन पर व्यंग्य किया है -

एक प्रेमी ने
अपनी प्रेमिका को
इंटरनेट पर बुलाया
याद दिलाया 'डार्लिग'
आज हमारी मुलाकात थी
पहली सालगिरह है शुभकामनाएँ।
आजकल वे उसी अंतआजल में फँसे
एक-दूसरे की तलाश कर रह हैं,
कहते हैं इंटरनेट पर
इक्कीसवी सदी का रोमांस कर रहे हैं। 50

आधुनिक युग में पाश्चात्य सभ्यता का अध्यधिक प्रभाव बड़ता जा रहा है। आधुनिक युग में समाज में धनाड़य व्यक्तियों के कुत्ते भी गरीब मनुष्यों से अच्छा जीवन व्यतीत कर रहे है। आज गरीबी के कारण मनुष्य का जीवन पशु से भी तुच्छ हो गया है। मानवता के इस तिरस्कार से क्षुब्द होकर एहसान कुरैशी ने व्यंग्य किया है।

जब एक रईसजादे ने
भीख माँगते बचे को
दुतकारा, फटकारा, मारा, भगाया,
और अपने विलायती कुत्ते को
पाँच सितारा होटल में
बिठाकर बिरयानी खिलाया।
दो आवारा कुत्ते
एक वर्ष में जितना खाते हैं

उतने में तो
गरीबों के
दस बच्चे पल जाते हैं।
इसलिए मेरा
कुत्ता पालकों से निवेदन है,
विदेशी कुत्तों का मोह टालिए,
और कम से कम
एक गरीब का बच्चा
गोंद लेकर पालिए
इससे हमारी समस्या घटेगी,
और कुछ नहीं तो
थोड़ी गरीबी दूर हटेगी। 51

कवि आशाकरण अटल ने भारतीय संस्कृति को लुप्त होते देखकर व्यंग्य द्वारा कटाक्ष किया है। भारतीय समाज में पाश्चात्य सभ्यता का ऐसा रंग चढ़ा है कि मनुष्य को इस विदेशी सभ्यता का अनुसरण करने में हानि भी हो तो भी उसी रंग में रंगे है। भारतीय संस्कृति में लोगों को आदर-मान-सम्मान था। आज सब खत्म हो गया है। आज की पीढ़ी भारतीय संस्कृति को अपनाना, अपना अपमान समझते है। खाने-पीने के तौर-तरीके भी अंग्रेजी के अनुसार बन गये है -

बुके सिस्टम दावत वो दावत हैं
जिसमें हर समझदार मेहमान
या तो घरसे खाना खाकर आता है
या फिर घर जाकर खाता है।
बुके दावत में कौन सैकड़ों बार खा चुका
पुराना, खुरटि बुफेबाज है
और कौन नया मेहमान है
इसकी पहचान बहुत आसान है।
पुराना अपनी प्लेट में
जरा-सा, एक दो चम्चम खाना
एसे धर लाता है

जैसे सत्यनारायण का प्रसाद लाया हो।
और नया अपनी प्लेट में
खाने की हर डिश, ऐसे भर लाता है,
जैसे कोई भिखारी दस घरों से
भीख मांगकर आया है।
जिस तरह आदिवासी लोग
घेरा बनाकर नाच का आनंद उठाते हैं,
उसी तरह आदि-बुफेवाज
पांच-सात जन का घेरा बनाकर
खाने की औपचारिकता निभाते हैं।
वाह रे बुके तेरी बलिहारी
उल्टी ही रीति है सारी
बचपन में गांव में सीखा था
खाना हाथ धोकर खाओ
जूते उतारकर खाओ
खाते समय बातें मत करो
और खाने के बाद अच्छी तरह कुल्ला करो।
बुफे दावत
यहाँ सब बिना हाथ धोए
और जूते पहनकर खा रहे थे
खाते-खाते बाते भी किये जा रहे थे।
और खाने के बाद
मेरे बेटे किसी ने कुल्ला नहीं किया
भारतीय संस्कृति में ऐसों को गंवार कहते हैं
आज फाइव स्टार होटल में पता चला
यहाँ, कुल्ला करने वालों को गंवार समझते है। 52

स्वतंत्रता से पूर्व की युवा पीढ़ी स्वदेशी भाषा, संस्कृति सभ्यता को अपनाना अपना सिद्धान्त समझते थे। परन्तु आज की युवा पीढ़ी पाश्चात्य संस्कृति का अनुसरण करने में अपनी महानता समझती है। फिल्मों को देखकर अपना भविष्य का

निर्णय लेते है। आज की युवा पीढ़ी का भविष्य पतन की ओर जा रहा है। इस सदंर्भ में कवि आशाकरण 'अटल' ने लिखा है -

मुन्ना लाल का
शौक है- फिल्म देखना,
मुन्ना लाल का
मिशन है- हीरो बनना
मुन्ना लाल का फिल्मी जीवन
तब शुरू हुआ,
जब पहली बार वह
फिल्म देखने गया,
वो दिन और आज का दिन
उसने स्कूल की तरफ मुँह तक नहीं किया
अपना पूरा जीवन
सिनेमा को सर्मपित कर दिया
हीरो बनने के लिए
जो जतन कर सकता था
वो सब उसने किए
फिल्में देखी-पैसे चुराए
बड़े भइया के चांटे खाए
फेल हुआ-स्कूल छोड़ा
घर वालों का सपना तोड़ा
आजकल सिनमो हॉल में
'मुम्फली' बेचता है-
फुरसत में हीरो बनने की सम्भावनाओं पर
खुद से बातें करता है। 53

आधुनिक युग में पश्चिमी सभ्यता पूरे देश में व्याप्त है। पाश्चात्य सभ्यता के प्रभाव के कारण समाज में नाते-रिश्ते सभी व्यर्थ है। पति-पत्नी के सम्बन्धों में टकराव हो गया है। आज के सम्बन्ध भी पाश्चात्य सभ्यता से अपवित्र हो गये है। समाज की विकृतियाँ अपनी सीमा को पार कर चुकी है। समाज की बदलती हुई

सभ्यता पर कवि अशोक 'अंजुम' ने व्यंग्य किया है-

एक दिन
एक चरित्र अभिनेत्री के
पति ने खीजते हुए कहा-
'आज तुम
सूटिंग पर नहीं जाओगी
मै वर्षो से पका रहा हूँ
आज, खाना तुम पकाओगी।'
यह सुनते ही अभिहनेत्री गुराई -
'तुम्हे ऐसा कहते
जरा लाज नहीं आई।
ध्यान से सुनो,
आज के बाद
फिर अभी ऐसे मत कहना
तुम्हें समझा रही हूँ।
और हां,
बचों का ख्याल रखना
मैं फिल्म पतिव्रता की
सुटिंग पर जा रही हूँ।' 54

पाश्चात्य सभ्यता का प्रभाव सामाजिक परिवेश पर पूर्ण रूप से स्थापित हुआ है। आधुनिक युग में सम्बन्धों का कोई महत्व नहीं रहा है। आज की सभ्यता अपवित्र हो गयी है। आज की युवा पीढ़ी फिल्मों को देखकर पाश्चात्य सभ्यता का अनुसरण करने लगी है। समाज की इन विसंगतियों पर कवि सुभाष 'काबरा' ने व्यंग्य किया है-

विवाह के तुरंत बाद
पत्रकार ने विवाहित अभिनेत्री से किया सवाल
लगता है हज़ारों प्रशंसको का दिल तोड़ देगी
विवाह के बाद आप फिल्मों में काम करना छोड़ देंगी
अभिनेत्री ने कहा -
अभी कुछ सोचा नहीं

कि विवाह के बाद जिन्दगी को कौन-सा मोड़ दूँ?
हो सकता है कि फिल्में न छोडूं
पति को ही छोड़ दूँ। 55

आज की युवा पीढ़ी अपनी भारतीय संस्कृति को भूलकर पाश्चात्य संस्कृति को अपनाना अपना धर्म समझती है। आज की युवा पीढ़ी पाश्चात्य संस्कृति में जीने में अपनी महानता समझती है। युवाओं की यार्थाथता को देखकर कवि बालकृष्ण 'गर्ग' ने व्यंग्य की अभिव्यक्ति की है -

ये हैं 'डिस्को' के दीवाने,
अंट-संट गाते हैं गाने
सभी उम्र के लड़की-लड़के
जिनकी बोटी-बोटी फड़के,
नाचा कतरे गड़बड़-सड़बड़
जाने क्या-क्या करते बड़-बड़,
हा-हा, ही-ही, हू-हू, हे-हो
हँसते कभी, कभी देते रो,
बदन मरोड़ें, झटकें-पटकें
उछलें-कूदें, थिरके, मटकें
उलटे-पलटें, धूमें झूमें
हाँफे-काँपे, तड़पें-सिसकें
डान्स खत्म होते ही खिसकें
धमाचौकड़ी, ग़जब शोरगुल
'डिस्को' डांस बड़ा बंडरफुल। 56

3. समाज में व्याप्त भ्रष्टाचार अनैतिकता, अन्याय -

1. सामाजिक भ्रष्टाचार :-

आधुनिक युग में सामाजिक परिवेश में पाश्चात्य सभ्यता का पूर्ण रूप से प्रभाव हो गया है। समाज में बढ़तीं विकृतियों को देखकर कवि अरुण जैमिनी ने व्यंग्य किया है। भारतीय समाज ने भ्रष्टाचार की अधिकता बढ़ती जा रही है। समाज में शिक्षा का क्षेत्र, कार्यालय और न्यायतंत्र कहीं भी ईमानदारी नहीं रह गयी है। पूरा समाज भ्रष्टाचार से दूषित हो गया है।

अध्यापक जो सचमुच पढ़ाए
अफसर जो रिश्वत न खाए
बुद्धिजीवी जो राह दिखाए
कानून जो न्याय दिलवाए
ऐसा बाप जो समझाए
और ऐसा बेटा जो समझ जाए
ढूँढ़ते रह जाओगें। 57

आज समाज की कोई भी गतिविधि भ्रष्टाचार से अछूती नहीं है। आधुनिक युग की युवा पीढ़ी की समस्याये बढ़ रही है। और आज के शासकों को इसकी कोई परवाह नहीं है। सभी न्यायतंत्रों सरकारी कोर्यालयों में भ्रष्टाचार की अधिकात बढ़ती जा रही है। शैल चतुर्वेदी ने समाज के यथार्थ को देखकर व्यंग्य पंक्तियाँ लिखी है-

व्यंग्य उस नेता को सुनाओ,
जो जन-सेवा के नाम पर ऐश करता रहा
और हमें बेरोजगारी का रोजगार देकर
कुर्सी को कैश करता रहा
व्यंग्य उस अफसर को सुनाओ
जो हिन्दी के प्रचार की ढ़पली बजाता रहा
और अपनी औलाद को अंग्रेज़ी का पाठ पढ़ता रहा।
व्यंग्य उस सिपाही को सुनाओ
जो भ्रष्टाचार को अपना अधिकार मानता रहा
और झूठी गवाही को पुलिस का संस्कार मानता रहा। 58

स्वतंत्रता से पहले भारत में सामाजिक जीवन में मूल्यों की कुछ मान्यतायें थी। संस्कार थे, भगवान को मानने वाले शांति का ज़ीवन व्यतीत कर रहे थे। जीवन में लालसाओं की अति नहीं थी। परन्तु आज भारत देश में भारतीय संस्कृति लुप्त हो गयी है। देश के नेताओं ने इसे दूषित, कलंकित कर दिया है। भारतदेश में बढ़ती, विसंगतियों, विद्रूपताओं, अत्यधिक भ्रष्टता पर कवि सुरेश उपाध्याय ने व्यंग्य द्वारा यथार्थ की अभिव्यक्ति की है। आज की युवा पीढ़ी सामाजिक भ्रष्टाचार के कारण इधर-उधर भटक गयी है। न उसका कोई ध्येय रहा न उद्देश्य बेरोजगारी की समस्या से पीड़ित है -

आज मेरा मन बड़ा उदास है
मेरा भी एक बेटा था, वह गुम हो गया है
वह केवल एक भाई अपनी बहिन का है
वह हमेशा बैल बोटम पैन्ट पहनता है
पुस्तकें पढ़ने का उसे चाव नहीं है
रामायण गीता से उसे लगाव नहीं है।
सूर या तुलसी के पदों को सुनकर
वह कभी खिल नहीं सकता
मेरा बेटा किसी स्कूल के पास मिल नहीं सकता।
मेरा बेटा जहाँ कही भी होगा
वहाँ जवान लड़कियाँ तो जरुर होंगी
तब तो मेरा बेटा उन पर मर मिटा होगा
अपनी बदमाशियों और हरकतों के कारण
वह हर गली चौरस्ते पर
चप्पलों सें पिटा होगा।
भगवान किसी के बाप को न दिखलाए ऐसी बेकली
क्या पता, वह किसी होटल में साफ कर रहा होगा प्लेंटे
या ट्रेन में बेच रहा होगा मूँगफळी

* * *

मैने उसकी पहचान आप लोगों को बता दी
लेकिन आपने शायद मुझे नहीं पहचाना
मत करो कि मैं कोई आदमी विशेष हूँ-
मेरे दोस्तो
मैं एक बदनसीब देश हूँ
जिसका नाम हिन्दूस्तान है
जो अपने ऐसे बेटे के कारण बदनाम है
जिनका कोई ध्येय नहीं है
उद्देश्य नहीं है,
हजारों और लाखों लड़के ऐसे निकम्मे हैं

न जाने कितने माँ-बाप
कितने भाई-बहिन
कितनी बहू-बेटियाँ जिनके गम में हैं। 59

भारतवर्ष में हजारों बर्षी से युद्ध होते रहे परन्तु भारतीय संस्कृति को धरोहर के रूप में रखा गया है। संस्कृति को प्रमुखता दी गयी। मानवता को प्रमुखता दी जाती रहीं। परन्तु अधुनिक समाज में मानवता शब्द बनकर ही रह गया है। एक दूसरे से हमदर्द नहीं रही है। धर्म की ओट लेकर भ्रष्टाचार बढ़ रहा है। समाज में बढ़ते भ्रष्टाचार पर कवि अशोक 'अंजुम' ने व्यंग्य पंक्तियाँ प्रस्तुत की है -

जंग हमारी जारी है,
आप इशारा तो कीजैगा
बस, पुरी तैय्यारी है।
बसें जलायें,
लूट मचायें,
भाई से भाई
को लड़ाये,
चीख पुकारों की ध्वनी अब तो
लगती हमको प्यारी है,
आप इशारा तो कीजैगा
हां, पूरी तैय्यारी है।
ओट धर्म की,
गोट धर्म की,
सभी को देगे
चोट धर्म की,
पहले हिन्दू को मारा था
अब मुस्लिम की बारी है,
आप इशारा तो कीजैगा
लो, पूरी तैय्यारी है। 60

भारतीय समाज में बढ़ती हुई विकृतियों से राष्ट्र को सबसे अधिक खतरा है। सत्ता और अर्थ तंत्र की सशक्त ताकतें लाचार आदमी को लूटने में लगी है, उसकी

अस्मिता और शील सुरक्षित नहीं है। समाज में भ्रष्टाचार और बेरोजगारी चरम-सीमा पर पहुँच गयी है। कवि अशोक 'अंजुम' ने सामाजिक यथार्थ पर व्यंग्य किया है -

किसी को मिल गई कोठी, किसी को कार कर्फ्यू में,
मगर हम तो लूटे है, दोस्तो हर बार कर्फ्यू में।
किसी को दूध की चिन्ता, किसी का ख़त्म आता,
तरसता कोई डाक्टर को पड़ा बीमार कर्फ्यू में।
किसी की टांग तोड़ी, और किसी की खोपड़ी फोड़ी,
पुलिसिया हो गए बर्बर बड़े लठमार कर्फ्यू में।
गरीबी से घुटे तो ये कहा बैरोजगारों ने-
चलो बारुद का हम भी करें व्यापार कर्फ्यू मै। 61

स्वतंत्रता से पूर्व भारतीय समाज में जीवन की कुछ मान्यताएँ थी अपनापन, प्रेम, सद्व्यवहार चारों ओर व्याप्त था। 1960 के बाद सामाजिक स्थिति दयनीय हो गयी है। चारों तरफ भ्रष्टाचार की अधिकता हो गयी है। इस संदर्भ में कवि अनिल 'धमाका' ने व्यंग्य किया है।

हमसे पूछा गया-
'किन्हीं' दो फसलों के
नाम बताएँ
स्वतन्त्रता-प्राप्ति के बाद लगातार
बढ़ रही हो जिनकी पैदावार।
हमने कहा- 'भ्रष्टाचार व आंतकवाद।' 62

आजादी के बाद भारत में समाज में संघर्ष तीव्र गति से बढ़ रहा है। सच्चाई और ईमानदारी देखने को नहीं मिल रही है। समाज का व्यक्ति शांति चाहता है। और जाति-धर्म के नाम पर भ्रष्टाचार मचा हुआ है। आज के सम्बन्ध दिखावे के लिये रह गये है। समाज की बदलती हुई परिस्थितियों पर बलजीतसिंह कवि ने व्यंग्य किया है -

सच्चाई की लाश पर, उग आई है घास,
अब भी क्या संदेह है, नहीं कमायत पास।
व्यक्ति चाहता शांति, जाति चाहती युद्ध,
भीड़-तंत्र के देश में, कैसे जिएँ प्रबुद्ध।

* * *

संबंधों की आड़ में, लूट रहे शैतान,

लुटने वाले लुट रहे, बेच रहे ईमान। 62

भारत में मानवीय मूल्यों का कोई सरोकार नहीं रहा है। भारत का सभ्य समाज भ्रष्टाचार को अधिकता दे रहा है। आज के भौतिक युग में अविश्वास, धोखा, बेईमानी, आदि की अधिकता बढ़ गयी है। मनुष्य को एक-दूसरे पर विश्वास नहीं रहा है। भारतीय समाज में ईमानदारी से जीना मुश्किल हो गया है। समाज की विकृतियों पर कवि सतीश चंद्र कमलाकर ने व्यंग्य किया है।

जीना मुश्किल हो गया, कन्याओं का आज,

छेड़छाड़ करने लगा, उनसे सभ्य समाज।

शम दाम के मध्य में प्रिय न किसी को राम,

यह युग भौतिकवाद का, सबकों प्रिय अब दाम।

अविश्वास, धोखा-घड़ी, हेरा-फेरी-लूट।

यदि तू अपना न सकें तो भारत से फूट। 64

किसी भी युग में समाज समस्याओं से पूर्णतः मुक्त नहीं रहा है। परन्तु आधुनिक युगमें समाज में अत्यधिक समस्यायें पैदा हो गयी है। समाज के बढ़ते हुए भ्रष्टाचार का बोलबाला है। इस समाज में ईमानदारी और न्याय समाप्त हो गया है। इस संदर्भ में काका हाथरसी का व्यंग्य द्रष्टव्य है-

डाके, हत्या, अपहरण चहुँदिशि हाहाकार,

आई नहीं गिरफ्त में, हुई पुलिस की हार।

हुई पुलिस की हार, देख अंतर का दर्पण,

फेकं दिए हथियार,कर दिया आत्मसमर्पण,

काका कविता लिखकर, जीवन व्यर्थ गँवाया,

होकर के बदनाम, नाम फूलन ने पाया।

यदि सत्ता में होते तो, हम निर्णय लेते।

हिसंक हत्यारों के जय-जयकार हो रहे,

देख दृश्य यह न्याय और ईमान रो रहे। 65

आज के समाज में भ्रष्टाचारी लोगों की अधिकता पायी जाती है। जिन पर काका हाथरसी ने व्यंग्य किया है। आज का व्यक्ति बेईमानी से पैसा कमाता है

आंतरिक रूप से उन्हें हमेशा डर बना रहता है-

बीबी डरें मुटापें से, बाबू डरें बुढ़ापें से,
टैक्स, चोर या भ्रष्टाचारी डरते-रहते छापे से। 66

भारत देश में सामाजिक परिवेश पूर्ण रूप से भ्रष्ट हो गया है। सरकारी कार्यालय भ्रष्टाचार को बढ़ावा दे रहे है। आज के भारतीयों को सिर्फ अपनी चिन्ता है। कैसे भी विदेशी माल लाकर उसे बेचना आज की पीढ़ी का व्यवसाय बन गयी है। समाज में होने वाले परिवर्तन पर काका हाथरसी ने व्यंग्य किया है-

रखे छिपाकर बजत को, केंद्रीय सरकार,
हो जाए यदि लीक तो करे विपक्ष प्रहार।
करे विपक्ष प्रहार, पक्ष भी घबराता है,
कैसे आउट हुआ पता नहिं चल पाता है।
छिपा-छिपाकर तस्कर, माल विदेशी लाते,
रोते हैं, जब एअरपोर्ट पर पकड़े जाते। 67

भारतीय समाज की बढ़ती हुई विकृतियों, विद्रूपताओं पर काका ने व्यंग्य किया है। आज के युग में जहाँ पर मनुष्य के प्राणों की रक्षा होनी चाहिए। उन अस्पतालों को नर्क बनाया हुआ है। वहाँ पर मरीज को कोई सुविधायें नहीं है। और फिल्मों के स्थान स्वर्ण की भांति-चमकते है। आधुनिक युग में जीवन-मूल्यों का पतन होता जा रहा है -

इसी धरा पर देख लो,
स्वर्ग-नर्क का फर्क।
फिल्मी बँगले स्वर्ग हैं, अस्पताल है नर्क। 68

आधुनिक युग की पीढ़ी के लिए सिर्फ पैसा ही उनका सिद्धांत बन गया है। चाहे वह किसी भी तरीके से कमाया जाये। भारतीय समाज में चारों ओर पैसा कमाने की ललच में लूटमार चलती है। किसी का कोई धर्म ईमान नहीं रहा है। समाज में बढ़ते भ्रष्टाचार पर काका हाथरसी ने लिखा है -

लूटमार चहुँदिश चली,
तुम क्यों हो बेकार,
रेल लूटिए रात को, दिन में मोटरकार। 69

आधुनिक युग का व्यक्ति इतना स्वार्थी हो गया है। उसे अपने स्वार्थ के लिये

जुठा, फरेब को प्रधानता देता है। आधुनिक युग में नारी की इज्जत का कोई मूल्यन हीं रह गया है। दिन दहाड़े बलात्कार हत्या की खबरें सुनाई देने लगी है। समाज में भ्रष्टाचार चरम सीमा पर बड़ गया है। इस संदर्भ में जहीर कुरेशी का व्यंग्य द्रष्टव्य हैं-

इक पागल भीड़ में सिंहक स्वरों के बीच,
फंस गया है कांच का घर पत्थरों के बीच।
दिन दहाड़े रेप, हत्या, रहजनी, डाके,
हादसा है जिन्दगी इन मंजरों के बीच।
हाँ, सियासत रोज ही पंछी उड़ाती है,
किन्तु, रख देती है टाइम-बम परों के बीच,
है बहुत मशहूर बंदर-बांट रोटी की,
आप कैसे फंस गये, इन बन्दरों के बीच।
लोग कपड़े की तरह बुनने लगे ग़जलें,
क्योंकि ग़जले आफँसी है, बुनकरों के बीच। 70

आधुनिक युग में समाज में भ्रष्टाचार तेजी से बढ़ता जा रहा है। राजनीति में कुर्सी का किस्सा तो सर्वोपरि है। उसके पीछे नेता अपना धर्म-ईमान सब खो बैठे है। इसे छोड़कर समाज के अन्य क्षेत्रों में भी भ्रष्टाचार की अधिकता बढ़ गयी है। धन प्राप्ति हेतु छल-कपट, धोखा धड़ी, कालाबज़ारी आदि बढ़ते जा रहे है। आधुनिक युग में गरीब होना अभिशाप है। गरीब की बेटी को दहेज की आन में जलना पड़ता है। समाज के बढ़ते हुए भ्रष्टाचार पर शैल चतुर्वेदी ने व्यंग्य किया है -

खत्म हुआ किस्सा कुर्सी का
अब आगे का सुनो हवाल
चंदे का धंधा है जिसका
बिरा छुरी के करे हलाल
काले धन का काला जादू
जिस पर चला हुआ बेहाल
रात-रात भर नींद न आए
लाला कहने को खुश हाल
बाबा जी का भरा कमंडल
कहीं का आटा, कहीं की दाल

हत्या कर थाने में छुप जा
बच जायेगा प्यारे लाल
बहू बनी निर्धन की बेटी
आग का दरिया है ससुराल
बात पते की कहता हूँ मैं
विक्रम बोला सुन-बैताल
तेरा मेरा क्या दुनिया में
जो भी है- जी का जंजाल
जियो और जीने दो सबको
तोड़ो नफरत की दीवाल
दुनिया के कोने-कोने से
विश्व शांति की जले मशाल
बंद करो यह खून की होली
और उड़ाओ रंग गुलाल। 70

आधुनिक युग में समाज में कोई भी क्षेत्र ऐसा नहीं है जहाँ शांति हो आधुनिक समाजमें ईमानदारी और बेईमानी एक ही तराजू में तौले जाते है। इस समाज में भ्रष्टाचार, बेईमानी, आगजनी इसी को मान्यता मिल रही है। इस बढ़ते हुए भ्रष्टाचार के कारण समाज का वातावरण दूषित हो गया है। इस संदर्भ में रामेश्वर वैष्णव ने व्यंग्य द्रष्टव्य किया है -

राहत के नाम पर भी मुसीबत है दोस्तो,
कुछ तो कहो ये कैसी सियासत है दोस्तो।
यह-जिन्दगी नहीं जलाल है दोस्तो,
अहसान के अदांज में आफत है दोस्तो।
सड़को पे शरीफों का निकलना मुहाल है,
नंगो को नाचने का इजाजत है दोस्तो।
घर से निकाले जा रहे है आज वहीं लोग,
जिनका कि इस मुल्क में बहुमत है दोस्तो।
मजहब की आग बस्तियाँ जला रहा तमाम,
पूजाघरो से बँट रही नफरत है दोस्तो।

दंगे में सिर्फ साठ भरे सैकड़ो घायल,
कहता है रेडियो कि खैरियत है दोस्तो?
यूँ आँख मूँदकर न इत्मीनान से चलो,
राहों में प्रजातंत्र के पर्वत है दोस्तो।
तुम आदमी जहाँ हो यहाँ सिर्फ वोट दे,
बस इसलिये तुम्हारी जरुरत है दोस्तो।
कुछ बेकसूर लोग कत्ल कर दिये गये,
जब भी समुचे क्षेत्र में दहशत है दोस्तो।
बारिश है, अंधेरा है आँधिया है नाव है
तस्वीर से यह आज का भारत है दोस्तो।
तालिम नई होगी, सुनके खुश है लोग बाग.
स्कूल भले हो बगैर छत है दोस्तो।
हिन्दी में करो काम ये फरमान मिला है,
अंग्रेजी में साहब का दस्तखत है दोस्तो।
इंसाफ बिक रहा है खुले आम आजकल,
बाजार का सूरत में अदालत है दोस्तों।
भगवान के लिये इसे गजल न समझना,
यह तो तुम्हारे नाम खुला खत है दोस्तो। 72

आधुनिक युग में व्याप्त भ्रष्टाचार के कारण समाज का वातावरण दूषित होता जा रहा है। मनुष्य के बीच आपसी, प्रेम, सद्व्यवहार नहीं रहा है। समाज का हर व्यक्ति एक दूसरे का दुश्मन बन गया है। मनुष्य के जीवन में मूल्यों का कोई सम्बन्ध नहीं है। इस समाज में शांति खोजने पर भी नहीं मिल रही है। भ्रष्ट सामाजिकता पर कवि रामेश्वर वैष्णव ने व्यंग्य किया है -

हर तरफ खूँखार हलचल है,
राह शहर भी एक जंगल है।
दर्शकों में दुश्मनों की भाई,
दोस्तो के बीच दंगल है।
रास्तों पे है ठगो का राज,
मंजिलो के नाम दलदल है,

हवा में ठहरा हुआ आतंक,
जिन्दगी चिड़िया सी चंचल है।
ढूंढ़ने निकला जो मन की शान्ति,
आदमी सचमुच वो पागल है,
पोढ़ियों पर ओ खरे लोगो,
सामने देखो रसातल है, 73

भारतदेश पूर्ण रुप से खोखला होता जा रहा है। समाज का कोई भी क्षेत्र भ्रष्टाचार से अछूता नहीं रहा है।

आज समाज में रिश्वत, बेईमानी, ब्लैक मार्केटिग, खुले आम चल रही है। सिनेमा की तरफ आज की युवा पीढ़ी अधिक आकर्षित है। समाज में आर्थिक विषमताएँ भी बढ़ती जा रही है। समाज के परिवर्तन को देखकर कवि ले. सम्राट ने व्यंग्य पंक्तियाँ लिखी है -

शादियों में चल रही है खुब शो-की धूमधाम,
लोग कहते हैं, जमाना बने रहा है कंगाल, देख।
एक रुपिया पर है सम्मन वंशियों के लौटते,
दफ्तरों में बिछ रहा है, रिश्वतों का खाता देख।
बढ़ रहा व्यापार में है, ब्लैक मार्केटिंग खुली,
बिक रहा पैसों में अब इंन्साफ उसका फैला देखा।
दूख्तरे रिज चल रही है, आज हरसू बेनकाब,
कट रही कितने जिए के भी कड़ो में नाल देख।
मील लाखो देखती है, तू भी उस दूरबीन से,
नाप दुनियाँ की हबश स्पूतनिक का चाल देख।
कुछ सिनेमा और फैशन की दवा का रुख परख,
जिन्दगी का हर सतह पर उठ रहा भूचाल देख।
मिटेत मँहगी से गरीबो का हकीम आवाज सुन,
मंत्रियों का नित नये दौरो में इस्तकबाल देख। 74

आधुनिक सभ्यता ने मानवीय मूल्यों की उपेक्षा की है। आज की पीढ़ी भारतीय संस्कृतिक को भूल गयी है। समाज में ईमानदारी से रहना मुश्किल हो गया है।

आज मनुष्य का धर्म सिर्फ पैसे कमाना है। उसके लिये सभी अपना धर्म-ईमान खो देते है।

पढ़े गीता, पियें गंगा का जल, मंदिर में दर्शन लें,
समझकर राह जन्नत की, तबियत जिसमें हो जिसकी।
हकीम अपना तो सीधा और सच्चा स्वर्ग है इसमें,
हमें जीने को कुर्सी चाहिये, पीने को हो व्हिसकी।
भागवत, गीता रटे चल रोज रामायण तो क्या,
पहले आपने दिल के आइने में धूँधलेपन को देख।
पापा से तूने जो दौलत कमाई है 'हकीम'
पुष्ण फले देशा ये, पहले उस अपने धन को देख।
रह के बेईमान, डर-कर चल बदा की राह से,
बेइमानी से तो जन्नत क्या सिला मिलता नहीं।
भूल जा अपने को हाजिर हर जगह उसको समझ,
पोथियों के हर्ष पढ़ने से खुदा मिलता नहीं। 75

आधुनिक समाज में भ्रष्टाचार का जाल चारों तरफ फैल गया है। आज समाज में शरीफ कहने वाले कोई इन्सान नहीं रह गये है। सरकारी कर्यालयों में ईमानदारी से कार्य करना बन्द हो गया है। आज के कर्मचारी बिना काम किये ही तनख्वा पा रहे है समाज की इस वास्तविकता को कवि ने व्यंग्य पंक्तियों में प्रस्तुत किया है।

वो बोली कमाल है
जो ड्राफ्ट बनायेगा
वही आपको यहाँ
भिजवा रहा है
पता नहीं देश को
क्या होता जा रहा है
आप फार्म भरकर
उसे दीजिये
और इसी से ड्राफ्ट लीजिये
दोबारा हमारे पास आने का
जहमत मत पालिये

हमने कहा देवी जी
मन से खुशफहमी
निकालिये
नौकरी ढूंढ़ने से फुर्सत नहीं है
छोकरियों को क्या ताके
निगाहे रोजगार समाचारों से हटे
तो कहीं और झांके
उस काउंटर की लाइन में पहुँचे तो
मातमी सूरत वाले
चाय पीने जा रहे थे
साथ में एक दो को
और ले जा रहे थे
हमने कहा काम के वक्त चाय
कमाल है
साथ खड़े सज्जन बोले
हर जगह का
यही हाल है
वो तो यहाँ गनीमत है
जो ये काम के वक्त
चाय के लिये जाते है
वर्ना कई जगह तो
लोग चाय के वक्त ही काम पर आते हैं। 76

कवि जयकुमार 'रुसवा' ने समाज की वास्तविकता को देखा और उस पर मनुष्य की भीड़ में ईमान नाम की कोई वस्तु नहीं है। समाज में चारों तरफ भ्रष्टाचार ही दिखायी देता है। इस संदर्भ में जय कुमार रूसवा ने स्पष्ट किया है -

भारत के
सुसंकृत इतिहास में
जोड़ा गया
भ्रष्टाचार का

ऐसा ड्रामा
जिसमें
न कोई
फुल स्टोप है
न कामा। 77

आज भारत देश की सम्पूर्ण व्यवस्था भ्रष्ट हो गयी है। मनुष्य अपनी जरुरतों के लिये एक-दूसरे की जान भीले लेते है। आधुनिक युग में व्यक्ति अपने स्वार्थ के लिये कुछ भी करने को तैयार है। समाज के बढ़ते हुए भ्रष्टाचार को देखकर डॉ. श्री रामठाकुर दादा ने व्यंग्य द्रष्टव्य किया है -

मन में सोचा अरे विधाता ये क्या बना बनौआ आय।
तभी पेट में छुरा अड़ गया, सम्मुख गया अँधेरा छाय॥
'जान अगर प्यारी है तो, सब जेबों का निकाल दो माल।
रूपये देकर दौड़ लगाओ, किसी को न बतलाना हाल॥' 78

भारतीय समाज में व्याप्त भ्रष्टाचार से सभी वर्ग प्रभावित हो चुके आज की युवा पीढ़ी शिक्षित होने के बाद अनेक डिप्लोमा लेकर इधर-उधर मारे फिर रहे है। इस देश के नेता समाज सुधारक सभी देश को लूटने में लगे है। आज देश की सम्पूर्ण व्यवस्था में भ्रष्टाचार का समावेश हो गया है। भारत देश में चारों तरफ आंतकवाद फैला है देश गुलामहोने की कगार पर है और समाज के मनुष्य अपने स्वार्थ में लिप्त है। देश की इस वास्तविकता पर कवि धूमकेतु ने व्यंग्य को बड़ी सुन्दरता से व्यक्त किया है -

यह मेरा देश है, मुझे इस पर नाज़ हैं?
क्योंकि यहाँ पैदा होने वाला हर बच्चा पैदा होते हीकर्ज दार है?
हर छात्र डिग्री-डिप्लोमा लेने के बाद भी बेरोजगार है?
हर सोया हुआ नेता, इस देश का जागरुक पहरेदार है?
हर समाज सुधारक, रात लूटलेने के बाद भी रात का चौकीदार है।
भर सको तो भर लो, लूट सको तो लूट लो।
अब यही आवाज है। यह मेरा देश है मुझे इस पर नाज है?
हड़ताल, घेराव, कलमबन्द
आंदोलन, सत्याग्रह, कामबन्द
अरे मजदूर कल-कारखानों में काम करते रहेंगे।

तो हड़ताल कौन करेगा?
जुलुस कौन निकालेगा
तोड़-फोड़ कहाँ होगी?
कैसे चलेंगी रेल की बोगी?
राजनीति की खिचड़ी कैसे पकेगी?
मंत्री जी की फोटो कैसे छपेगी
जनता फंसी राशन में, नेताजी ने भाषण में यहां जनता राज है?
यह मेरा देश है मुझे इस पर नाज है।
समानता लाओ।
साम्प्रदायिकता मिटाओ।
अरे गरीब न रहेगा तो अमीर से कौन लड़ेगा?
काश्मीरी गुड़ियाँ, लद्दाखी दुल्हन-
दुश्मनों के हाथों, फंसी हुई आज है।
यह मेरा देश है, मुझे इस पर नाज है। 79

भारतीय समाज भ्रष्टाचार से पूर्णतः ग्रसित हो गया है। समाज में कहीं भी ईमानदारी नहीं रह गयी है। कोई भी क्षेत्र भ्रष्टाचार से अछूता नहीं है। समाज में बेईमान, भ्रष्टाचारो की अधिकता बढ़ती जा रही है इस संदर्भ में डॉ. रामप्रसाद मिश्रा की व्यंग्य पंक्तियाँ द्रष्टव्य है -

'हमारा भारत महान'
जेब कतरों से सावधान।
शांति का लक्ष्य निर्भ्रम,
सीट के नीचे बम।
उन्नत है व्यापार,
ऋणो की भरमार।
राष्ट्रीय मुसलमान
फूले-फले पाकिस्तान।
परिवार-नियोजन
दो करोड़ नए जन।
अगणित देश निर्माता

देश रसातल जाता।
नया राष्ट्र बनाओ
भूखो ! मरते जाओ ।
जय जयकार करो,
घास से पेट भरो। 80

भारतीय समाज में चारों तरफ नैतिकता के मानदण्ड बदल गये है। चारों और बेईमानी, झूठ, फरेब की अधिकता है। लोग अपने स्वार्थ के लिए बच्चों के अपहरण करके धन कमाने में लगे है। और सरकार इस भ्रष्टाचार के सामने घुटने टेके खड़ी है। सरकार के पास भ्रष्टाचार रोकने की कोई ताकत नहीं है। भारतीय समाज आज के नौजवानों पर आस लगाये हुए है कि कोई तो भ्रष्टाचार रोकने इसके विरुद्ध आवाज लगायेगा। देश में कभी तो शांति होगी। इस कथ्य की दृष्टि से कवि आदित्य शर्मा लिखते है -

अपहरणों से लोग परेशान हैं।
गवां रहे प्रतिदिन लोग जान।
घुटनों को टेक देना सरकार की।
शेष रही भारत में पहचान है।
वो जो दिन दहाड़े बैंक लूट रहे हैं।
बहु बेटियों का धर्म लूट रहे हैं।
समझौते कर कर्णधारों से यहाँ,
अरेआम जेलों से वे छूट रहे है।
ऐसे देश द्रोहियों का शीश जो काटे
मेरा सच्चा एक मात्र बेटा वही है।
उसकी पुकार...
गली-गली जहाँ पर दंगे हो रहे।
नैनिताल भूखे और नंगे रो रहे।
बम फट रहे गली-गली में जहाँ
कुर्सियों पे नेतागण जहाँ सो रहे।
क्रांतिकारियों की मुझे फिर है तलाश।
तुम्ही में छिपा है मेरा भगत, सुभाष.

निज प्राण देके मेरी आन बचाओ,

शेष बची नौजवानों पे ही मेरी आस। 81

आधुनिक युग में समाज में मानवीय मूल्यों का विघटन तीव्र गति से बढ़ रहा है। आपस में बेईमानी झूठ, फरेब, दंगे आदि की प्राथमिकता बढ़ गयी है। आपसी रिश्तों का कोई महत्व नहीं रहा है। जिधर देखों उधर भ्रष्टाचार का जाल फैला नज़र आता है। इस संदर्भ में अशोक 'अंजुम' की व्यंग्य पंक्तियाँ द्रष्टव्य है।

और आज
हर तरफ जुलूस हैं
दंगे है, विस्फोट हैं
आदमी से वोट
और रिश्तों से बड़े नोट है।
बेईमानी है, भ्रष्टाचार है
झूठ की ताज पोशी है
सत्य को दुत्कार है।
कमजोरी है,
आए दिन हड़ताल है
अर्थात् जिधर देखो
उधर जाल ही जाल है
और अगर ऐसे ही चलता रहा
तो दोस्तो
कहीं ऐसा न हो
कि हर दिशा में सुनाई दे
चीखे ही चीखे
आओ उससे पहले
इस सिसकती मानवता को बचा ले
और खुद पर कन्ट्रोल करना सीखे। 82

स्वतंत्रता के बाद भारत में मूल्यों का पतन अति शीघ्र गति से हो रहा है। भारत में अनेक विसंगतियाँ, विद्रूपताएँ उत्पन्न हो गयी है। स्वतंत्रता के बाद भारत में लोकतंत्र का कोई महत्व नहीं है। मंहगाई के कारण व्यक्ति को जीना मुश्किल है। चारों

तरफ आंतकवाद, भ्रष्टाचार फैल गया है। आज के समाज में मानवीय मूल्यों का कोई अर्थ नहीं है। समाज के इस प्रकार के वातावरण में व्यक्ति को जीवन निर्वाह करना अति कठिन है। फिर भी देश में स्वतंत्रता दिवस मानाया जाता है। इस प्रश्न को कवि अनिल 'धमाका' ने व्यंग्य पंक्तियों द्वारा व्याख्यायित किया है -

स्वतंत्रता दिवस की पूर्व रात्रि,
स्वप्न में आये
बापू नेहरू, शास्त्री
उन्हें देखते ही हम गद्गद् हुए,
और वर्षा से मस्तिष्क में
कोध रहे प्रश्न जगे.
हमने पूछा-'बापू, हम स्वतन्त्रता-दिवस
क्यों मनाते है?
कृपया बतायें, मेरी है विशेष इच्छा।'
बापू बोले- 'वत्स 15 अगस्त है
सन् 1947 वाली स्वतन्त्रता की समीक्षा।
हम स्वच्छन्दता के झूले में कितना ऊँचा झूले।
श्रीमान लोकतंत्र कितना फले-फूले ?
साम्प्रदायिकता का जहर कितना मिट गया,
महंगाई की उड़ानों पर कहाँ तक अंकुश लगाया?
भ्रष्टाचार की दल-दल से देश बचाया गिरा,
कितना कम हुआ क्षेत्रवाद, आंतकवाद, सिरफिरा?
मानवता व राष्ट्रप्रेम का सबक कहाँ तक सिखाया,
आम नागरिक को कितना न्याय मिल पाया?
इन्हीं सब तथ्यों को जाँचना है और
इसीप्रतिबिम्ब में सन् 1947 वाली
स्वतन्त्रता को आँकना है।
यदि इनमें प्रगति आशावादी है,
प्रतिबिम्मब उजला है, तो
मेरा देश रोज स्वतन्त्रता-दिवस मनायेगे,

और यदि प्रगति निराशावादी है
प्रतिबिम्ब धुंधला है तो मेरे देश में
स्वतन्त्रता-दिवस कभी नहीं आयेगा। 83

स्वतंत्रता के बाद भारतीय समाज में अनेक विकृतियों का समावेश हो गया है। हर क्षेत्र में भ्रष्टाचार व्याप्त है। और देश के शासक इन परिस्थितियों को अनदेखा करके अपने कार्यो को पूरा करने में लगे है। इस विषय पर हरीश कुमार सिंह ने व्यंग्य किया है -

नौजवान को काम नहीं है,
शिक्षा का सम्मान नहीं है
सेनानी का नाम नहीं है
शिक्षक का कोई दाम नहीं है
मेहनतकश को आराम नहीं है
रिश्वत उन्हें हराम नहीं है
असली पर भारी है भैय्या
ये नकली सिक्के देखो
आसमान पर रहनेवालों
अबतो धरती को देखो
वरना देश चलाने वालों
तुम टीवी बीवी संग देखो। 84

भारतीय समाज में चारों तरफ भ्रष्टाचार का अतिरेक देखकर कवि अशोक अंजुम ने व्यंग्य किया है। कि समाज में भ्रष्टाचार इतना अधिक बढ़ गया है कि उसे रोकना असंभव कार्य है। और यह प्रकृति भी इस भ्रष्टाचार का कुछ नहीं बिगाड़ सकती है। प्रकृति का प्रकोप होने पर मासूमों को उसका शिकार होना पड़ता है -

उस दिन जैसे ही समाचार सुना, दिल अंदर तक दहल गया।
कि तमिलनाडु के कुंबकोणम में,एक स्कूल बुरी तरह जल गया
साथ ही जल गये नब्बे हँसते खिलखिलाते फूल।
किलकारियां भरते नौनिहाल और सारी व्यवस्था को सौंप गये
तमाम जलते हुए सवाल ए संगदिल विधाता
क्या संवेदनाओं से टूट गया है, तेरा भी पूरी तरह नाता

क्या उन मासूमों की चीखों का, तुझ पर नहीं हुआ असर कोई,
क्यों तेरा दिल नहीं पसीजा, क्यों तेरी आंख नहीं रोयी,
और ए आग,
कभी तो समझ से काम ले कभी तो ज़ाग
माना कि जलाना तेरा धर्म है तेरी थाती है
लेकिन तू हमेशा मासूम और कमजोरों को ही क्यों जलात है?
क्या तुझे दिखाई नहीं देते, भ्रष्टाचार ने डूबे दफ्तर सरकारी?
क्या तुझे दिखाई नहीं देते वे डॉक्टर
जो मरीजों की सांसो से खेल रहे हैं, या वे ठेकेदार, वे इंजीनियर
जो कमीशन और काले धन के साथ, भारत माता के सीने पर
मस्त होकर दण्ड पेल रहे हैं

* * *

ए आग ! तुझे कसम है, अब तू भविष्य में
अपने जले पक्ष को ही दिखाना
इस संसार से सदैव बुराइयों को ही फूंकना
कुंबकोणन की तरह
अब कभी मासूमों को मत जलाना....
अब कभी मासूमों को मत जलाना.... 85

2. व्यवस्था और पुलिस विभाग :-

आधुनिक युग में ईमानदारी कहीं ढूड़ने पर भी नहीं मिलती है। पुलिस तंत्र समाज में सबसे ज्यादा भ्रष्टाचार का जाल फैलाए है। आज की पुलिस को ईमानदारी व्यक्ति और मुल्जिम में पहचान नहीं रही किसी को भी पकड़कर पैसे लेते है। आज की पुलिस का यही व्यवसाय बन गया है इस संदर्भ में कवि अल्लड़ बीकानेरी की व्यंग्य पंक्तियाँ इस प्रकार है -

ज्यादा माल मन्ता मेरी
जेब में नहीं है अभी
पाँच का पड़ा है नोट
लीजिये, दरोगा जी। 86

आधुनिक युग की पुलिस अपने कर्तव्यों को भूल गयी है समाज में लोग इनके

कारनामोंसे भयभीत रहते है। अल्लड़ बीकोरी ने पुलिस के भ्रष्टाचार का मार्मिकता से निरुपण किया है -

पुलिसमैन बोला मै ऐसा
मौका कभी न खोता
ड्यूटी पर हूँ वरना मैं भी
पीछे-पीछे होता। 87

आज समाज में भ्रष्टाचार चरम सीमा पर है। समाज में चोरी, डकैटी, भ्रष्टाचार को बढ़ावा देने में पुलिस का सहयोग भी है। समाज में भ्रष्टाचार फैलाने वाले मनुष्यको पकड़ने पुलिस हमेशा नाकाम रहती है। इस संदर्भ में काका हाथरसी ने व्यंग्य किया है -

धन्य श्रीमती पुलिस जी, धन्य, धन्य सरकार
हुए आठ्वी बार फिर, नटवरलाला फरार॥
नटवरलाल फरार, बात सुनते थे ऐसी।
कहीं नहीं है पुलिस, चतुर बम्बई की जैसी॥
मुक्त उक्त अभियुक्त, कर रहा उल्टा दावा।
क्या समझा है मुझे, पुलिस का हूँ मै बाबा॥ 88

आज का सामाजिक परिवेश पूर्णतः बदल गया है। चारो तरफ, बेईमानी, झूठ, फरेब बढ़ता जा रहा है। आज के पुलिस तंत्र में कोई भी कर्मचारी ईमानदार नहीं है। आज के भ्रष्ट पुलिस तंत्र पर उसकी वास्तविकता पर व्यंग्य किया है -

वही सफल है आजकल,
काका थानेदार
एक मिनट में दे सके, गाली एक हजार। 89

समाज में व्याप्त भ्रष्टाचार से सभी क्षेत्र प्रभावित है। जिसमें पुलिस तंत्र में सबसे ज्यादा भ्रष्टाचार देखने को मिलता है। पुलिस कर्मचारी अपने को शरीफ कहलाते है वास्तव में ये सही अर्थो में बदचलन हैं। पुलिस कर्मचारियों को चरित्र की वास्तविकता पर कवि काका हाथरसी ने व्यंग्य लिखा है -

पुलिस द्वारा बलात्का4र
शहर में हाहाकार
दफा एक सौ नौ की दुहाई

प्रत्यक्ष गवाह की पिटाई
अभियुक्त बरी
हींग लगी न फिटकरी,
एक मसखरा बोलाः
यार भोला।
कुछ समझा या समझाएं?
चरित्र-चरित्र का चक्कर छोड़
चल, पुलिस में हो जाएँ
अपने भाग्य भी सँवर सकते हैं। 90

भारतीय समाज में ऐसा कोई भी क्षेत्र नहीं है। जहाँ भ्रष्टाचार व्याप्त न हो। आज के पुलिस कर्मचारी समाज में व्यक्तियों को डरा धमका कर पैसा कमाने में लगे हुए है। और समाज के लोगों को उनके आगे मजबूर होना पड़ता है। आज के पुलिस कर्मचारियों का धर्म, ईमान, सिद्धांत कुछ नहीं बचा है। इनके कारनामों से जनता में दहशत का वातावरण परिलक्षित होता जा रहा है। इस बदलते परिवेश पर काका हाथरसी ने व्यंग्य किया है -

पड़ा-पड़ा क्या कर रहा, रे मूरख नादान,
दर्पण रखकर सामने, निज स्वरूप पहचान।
निज स्वरूप पहचान, नुमाइश मेले वाले,
झुक-झुक करे सलाम, खोमचें-ठेले वाले।
कहाँ काका कवि, सब्बी-मेवा और इमरती,
चरना चाहे मुफ्त, पुलिस में हो जा भरती।

* * *

कोतवाल बन जाय तो हो जाए कल्यान,
मानव की तो क्या चली, डर जाए भगवान।
कहँ 'काका' जिस समय करोगे धारण वर्दी,
खुद आ जाएँ ऐंठ अकड़-सख्ती-बंदर्दी। 91

आज के भारतीय समाज में पुलिस कर्मचारियों का कोई कर्तव्य नहीं रहा है। वे भूल गये है कि उन्होंने यह बर्दी किसलिये पहनी है। समाज में बढ़ते भ्रष्टाचार से बेखबर होकर चैन की नींद सो रहे है। इस संदर्भ में काका हाथरसी ने व्यंग्य किया

है -

पुलिसमैन जी रेल-मेल में अच्छी ड्युटी दे रहे,
डाकू स्लीपर लूट रहे हैं, वे खर्राटे ले रहे। 92

आधुनिक युग में भारतीय समाज में पुलिस का कोई कर्तव्य नहीं रहा है। इनके खिलाफ बोलने की ताकात किसी में नहीं है। बर्दी पहनकर समाज में सामने ये जितने साफ-सुथरे, शरीफ दिखते है। वास्तविकता में पूर्णरूप से चरित्रहीन हो गये है। पुलिस कर्मचारियों के काले कारनामों को देखकर काका हाथरसी ने व्यंग्य किया है -

कोर्ट पर चोट करें, किसका बलबुत्ता,
हत्या शेरसिंह ने की, फाँसी चढ़ा कुत्ता?
ध्यान मत दो, औरत के चीखने-चिल्लाने में,
कौन कहता है, बालात्कार, हुआ थाने में?
झूठ नहीं बोलती, पुलिस की डायरी,
चुप रहो, आज है छब्बीस जनवरी। 93

भारतीय समाज में चारों तरफ भ्रष्टाचार व्याप्त है। समाज के लोगों को अनेक कठिनाइयों का सामना करना पड़ रहा है। चारों तरफ लूट-मार बढ़ रही है। पुलिस कर्मचारी इस भ्रष्टाचार को बढ़ावा देते हैं। इस भ्रष्टाचार को देखकर कवि काका हाथरसी ने व्यंग्य किया है -

अथवा डरते रेल में, यात्रा करते वक्त
चैन खिंचे गाढ़ी रुके, भय लगता है सख्त।
भय लगता है सख्त, घुसे डिब्बे में डाकू,
मुँह को कर दे बंद, रखे छाती पर चाकु।
पुलिस सो रही फर्स्टक्लास में, कौन जगाए,
पूरी स्लीपर कोच, लूट करके ले जाए। 94

आधुनिक युग में समाज में व्याप्त भ्रष्टाचार से गरीब को सबसे ज्यादा कठिनाइयों का सामना करना पड़ रहा है। गरीब दर-दर की ठोकरें खाकर अपना परिवार पालता है और पुलिस कर्मचारी गरीब समाज पर अपना अधिकार बनाये हुए है। बेईमानी, झूठ, फरेब इनका ईमान बन गयाहै। इनके जीवन में धर्म, सिद्धान्त की कोई जगह नहीं है। ये वर्दी पहनने के बाद अपनी इंसानियत खो बैठते है। इनके बदले हुए चरित्र पर कवि अनिल प्रियदर्शी ने व्यंग्य की अभिव्यक्ति की है -

दौ सौ रूपये के लिए
रात तक इंतजार करेगा,
और रात को कोई नहीं टकराया
तो क्या अपनी जेब से भरेगा।
ये सोचकर अपना डंडा उठाकर
थाने से बाहर निकल आया,
बाहर आकर
सड़क पर खड़े एक कोमचें वाले को धमकाया।
क्यों वे लाइसेंस है तेरे पास
नहीं ?
फिर खोमचां लेकर सड़क पर कैसे आया?
अब बूढ़ा खोमचें वाला गिड़गिड़ाया -
बाबूजी-बाबूजी
लाइसेंस बनवाने के लिए कई चक्कर लगाए,
लेकिन वहां बैठे बाबू
सौ रूपयें से नीचे ही नहीं आए।

* * *

दो दिन और खड़ा हो जाने दो
फिर तो अपने गांव-चला जाऊंगा
अगले हफ्ते मेरी लड़की की शादी है न ।
अब पुलिस वाला चकराया
थोड़ा उसके और नज़दीक आया।
बोला, लड़का तो ठीक है ?
इंतजाम हो गया क्या?
तो वह दुखी लाचार बूढ़ा भावना में बह गया,
पांच सौ रूपये जोड़ लिए है बाबू
गलती से उसके मुंह पर ही कह गया।
फिर क्या था
चंद ही मिनटों में क्या से क्या हो गया

पुलिस वाले की तो समस्या का समाधान हो गया,
लेकिन वो बूढ़ा
शून्य में कहीं खो गया। 95

आधुनिक युग के पुलिस कर्मचारियों की बेईमानी, भ्रष्टाचार को देखकर कवि सुर्यकुमार पांडेय ने व्यंग्य किया है कि पुलिस कर्मचारियों ने पुरे समाज में अपनी दहशत फैला दी है। शरीफ इन्सान इनके सामने आने से डरते है। इनका ईमान सिर्फ भ्रष्ट तरीके से पैसा कमाना है। आम आदमी को स्वतन्त्रता से रहना मुश्किल हो गया है। और डाकू, बेईमानों को दंगा, फसाद करने में बढ़ावा दे रहे है।

दिन था इतवार, सपरिवार, स्कूटर पर होकर सवार,
मैं ज्यों ही गली से सड़क पर आया,
किसी ने सीटी मारी, फिर पीछे से चिल्लाया -
एक पर पांच सवारी, अबे रुक स्कूटर है या लारी।
मैने कनखियों से देखा, खिंच आई अधरों पर केपन की रेखा।
वह पुलिसमैन था, वाणी से कुनैन था।
एक ने दूसरे को दिया आदेश...
तुम इतनी शराफत से आ रहे हो पेश, इस शैतान के साथ।
उठाकर अन्दर कर दो पूरे खानदान के साथ
भूल जायेगा टर-टर,
दूसरा बोला-देखो इसके पास लाइसेंस है।
मुझे लगा अब मामला टेसं है।
मैने लाइसेंस के लिए जेब में हाथ डाला,
अपना पर्स निकाला देखकर पर्स, सिपाही को हुआ हर्ष।
और जब उसे लाइसेंस पकड़ाया,
वह गुर्राया-अच्छा, लाइसेंस भी रखते हो
बड़े होशियार दिखते हो।
दूसरा बोला-अरे- सीधे न माने, तो ले चलो थाने।
मैने कहा खुशी-खुशी चलिए
यहाँ का थानेदार है, मेरा मौसेरा भाई।
चारों हाथ जोड़कर बोले- 'यह बात आपने पहले क्यों नहीं बताई?'

पूरी सड़क क्या फूटपाथ तक आपका है। 96

पहले पुलिस तंत्र को समाज में फैलते हुए भ्रष्टाचार को रोकने के लिए स्थापित किया गया। परन्तु धीरे-धीरे पुलिस कर्मचारी भ्रष्टाचार को रोकने के बजाय स्वयं भ्रष्ट होते जा रहे हैं। जिस जगह सत्य, ईमान को ही महत्व दिया जाता था। आज उस स्थान पर केवल असत्यता ने ही अपना प्रभुत्व जमा रखा है। इस संदर्भ में कवि अशोक चक्रधर का व्यंग्य द्रष्टव्य है -

किसी तरह सिपाही जी को
संतुष्ट करके
कवि सम्मेलन में आ गए,
और सोचने लगे
कि अपना नाम
असोकचक्रधर से बदल कर
शोक चक्रधर ही रख लें,
और अपने नाम के 'अ' को
थाने की दीवार पर लिख दें
वहां पहले से लिखा हुआ है-
'सत्यमेव जयते'
कल से लोग पढ़ा करेंगे -
'असत्यमेव जयते।' 97

कवि पं. सुरेश 'नीरव' पुलिस तंत्र में फैलते हुए भ्रष्टाचार पर व्यंग्य किया है। पुलिस कर्मचारियों का न कोई धर्म रहा न ईमान इनका सिद्धान्त सिर्फ अन्याय का साथ देना है। सिर्फ दिखावें के लिये समाज के रक्षक बनकर रह गये है-

छुपे हैं चोर थाने में पकड़ने हम कहाँ जाएं
दरोगा बन गया साला अकड़ने हम कहां जाएं। 98

पुलिस विभाग में बढ़ते हुए भ्रष्टाचार पर कवि मधुप पाण्डेय ने व्यंग्य द्वारा कटाक्ष किया है। कि आज के बदलते हुए परिवेश में झूठ, फरेब, बेईमान, लुटमार सभी का केन्द्र पुलिस तंत्र है। इसके कर्मचारी इसे रोकने के बजाय बढ़ावा दे रहे है। जिसके पास भ्रष्ट समाज बनाने की योग्यता है वह पुलिस में भर्ती हो जाते हैं।

आजकल पुलिस वाले/ डाकुओं को पकड़ने के लिए
जासूसी कुत्ते काम में क्यों नहीं लाते है?
हाँ-नहीं लाते हैं, ये हरामी सूघते-सूघते
सीधे थाने में ही घुसे चले जाते हैं।
थानेदार बुरी तरह झल्लाया। झल्लाकर गुर्राया
और बोला- 'क्या तुम्हारे पास दिमाग है
हनुमान जी बोले- / हाँ, दिमाग तो है
थानेदार बोला- / अरे दिमाग है, दिमाग नहीं होता
तो मै जरूर तुम्हारे कुछ काम आता
कम से कम पुलिस विभाग में नौकरी दिलाता। 99

समाज में व्याप्त भ्रष्टाचार से सभी क्षेत्र में वर्ग भ्रष्ट हो गये है। पूरे हिन्दूस्तान में भ्रष्टाचार का ही बोलबाला है।

आधुनिक युग में बेईमान आगे निकल जाता है और ईमानदार पीछे रह जाते है। सामाजिक व्यवस्था में भ्रष्टाचार फैलाने का श्रेय पुलिस तंत्र को है । पुलिस कर्मचारी अपने देश की संस्कृति सभ्यता भूल गये है। भ्रष्टाचार को अपनी संस्कृति बना ली है। इस संदर्भ में कवि अशोक चक्रधर लिखते हैं ।

पिछले दिनों
चालीसवाँ राष्ट्रीय भ्रष्टाचार महोत्सव
मनाया गया।
सभी सरकारी संस्थानों को बुलाया गया।
भेजी गयी सभी को निमंत्रण पत्रावली
साथ में प्रतियोगिता की नियमावली।
लिखा था-प्रिय भ्रष्टोदय,
आप तो जानते हैं
भ्रष्टाचार हमारे देश की
पावन-पवित्र सास्कृतिक विरासत है
हमारी जीवन पद्धति है।
हमारी मजबूरी है, हमारी आदत है।
आप अपने विभागीय भ्रष्टाचार का

सर्वोत्कृष्ट नमूना दिखाइए
और उपाधियाँ तथा पदक-पुरस्कार पाइए।

* * *

अब आया पुलिस का एक दरोगा
बोला-
हम न हो तो भ्रष्टाचार, कहाँ होगा?
जिसे चाहे पकड़ लेतेहैं, जिसे चाहे रगड़ देते हैं
हथकड़ी नहीं डलवानी, दो हजार ला,
जूते भी नहीं खाने, दो हजार ला
पकड़वाने के पैसे, छुड़वाने के पैसे
ऐसे भी पैसे, वैसे भी पैसे
बिना पैसे हम हिलें कैसे?
जमानत, तफ्तीश, इनवेस्टीगेशन
इनक्वायरी, तलाशी या ऐसी सिचुएशन
अपनी तो चाँदी है
क्योंकि स्थितियाँ वाँदी है,
डडे का जोर है
हम अपराध मिटाते नहीं हैं
अपराधों की फसल की देखभाल करते हैं।
वर्दी और डंडे से कमाल करते हैं। 100

आज भारतीय समाज में अनेक विकृतियों विद्रूपताओं का समावेश हो गया है। समाज की बुराइयों को रोकने के लिये पुलिस विभाग की जिम्मेदारी है। लेकिन पुलिस कर्मचारी समाज में दिखावे के रूप में अपना काम दिखाते है इनकी असली में वास्तविकता कुछ और होती है। इस संदर्भ में कवि कलामे हकीम ने व्यंग्य किया है-

एक रूपए का पंसेरी पांच गेहूँ था कभी,
आज ढाई सेर का भी कुछ न महंगा भाव है।
ये समय का फेर है इसका गिला क्या है, 'हकीम'
नाव पर गाड़ी कभी गाड़ी पै चलती नाव है।
तैश में आकर के कुछ, बोले बुर्जुग दुकान पर,

छोटे-छोटे से जुओंको झट पकड़ती है पुलिस।
जुगाड़खाने जो हमेशा चल रहे देखो 'हकीम'
उनको थरने को कहो, तो चट अकड़ती हे पुलिस। 101

भारतदेश में भ्रष्टाचार का जाल पूरे देश में फैला हुआ है। आम आदमी को स्वतंत्रता से जीना मुश्किल हो गया है। ऐसी स्थिति में भारतीय पुलिस विभाग अपने को श्रेष्ठ सिद्धान्तवादी कर्मचारी समझती है। पुलिस कर्मचारियों की निगाह में इनका ईमान, झूठ, फरेब, बेईमानी, भ्रष्टाचार ही सिद्धान्त बन गया है। पुलिस विभाग से भर्ती होनेवाले कर्मचारी भ्रष्टाचार को अपनाना कर्तव्य समझते है। पुलिस विभाग के बदलते हुए परिवेश पर कवि अशोक 'चक्रधर' ने व्यंग्य की अभिव्यक्ति की है -

हमारे मित्र शार्दुल सिंह विक्रीड़ित,
देश की दशा से बहुत पीड़ित।
बोले-
अब सहा नहीं जाता है
ऐसी दुर्दशा देख रहा नहीं जाता है।
और रोने लगे
गालों को
आंसुओं से धोने लगे।
मैने कहा-
विक्रीड़ित जी।
आप बेकार हैं पीड़ित जी।
चारों और सुख है
चैन है, शांति है
और ऐसी शांति
कि राम राज्य में भी
न रही होगी।
दंगे हमारे यहाँ
समारोहपूर्वक मनाए जाते हैं,
रोशनी के लिए
घर चलाए जाते हैं,

बेरोजगारों को काम मिल जाता है,
नागरिकों को
लूट का
सस्ता माल मिल जाता है
पुलिस हमारी चुस्त है,
विदेशों की सुस्त है।
हमारी दुरुस्त है।
अभी एक अंतराष्ट्रीय
पुलिस अधिवेशन हुआ था,
मालूम है एक विदेशी प्रतिनिधि ने
क्या कहा था?
चोरी होने के चौबीस घंटे के अन्दर हम चोर को पकड़ लेते हैं।
दूसरा बोला-
जनाब-
ज्यादा से ज्यादा
बारह घंटे में जकड़ लेते हैं।
तीसरा बोला-
चोर हमारे यहाँ लाइए
हमें पकड़ने के लिए
सिर्फ छः घंटे चाहिए।
हमारा एक पुलिस प्रतिनिधि बोला-
आपका विभाग भला
हमारा क्या मुकाबला करेगा,
यहां तो चौबीस घंटे पहले ही
पता होता है।
कि चोर कौन है
और कहाँ चोरी करेगा।
चोर डाकू हत्यारे और
बड़े-बड़े अपराधी

पुलिस से अपना भाईचारा मानते हैं,
पुलिस उनके बारे में
प्रायः सब कुछ जानते हैं।
पुलिस और अपराधियों का
ऐसा सुमधुर संबंध
कभी नहीं रहा। 102

वर्तमान युग में पुलिस विभाग में व्याप्त भ्रष्टाचार के कारण पूरा सामाजिक जीवन दूषित होता जा रहा है। एक आम आदमी को स्वतंत्रता से जीने के लिए पुलिस को रिश्वत देनी पड़ती है। इनका जाल पूरे समाज में फैला है। इनके दलाल समाज की हर खबरों को पुलिस अधिकारियों तक पहुँचते है। बेईमानी से पैसा कमाना इनका व्यवसाय बन गया है। इस विभाग की वास्तविकता को देखकर कवि सूर्यकुमार पाण्डेय ने व्यंग्य किया है -

अपने दर्दको आगे बढ़ाते हुए
आगंतुक कवि बोला -
यह सुनकर मैं हो गया मूक,
कहाँ कट्टा और कहां बन्दूक।
थानेदार भी हट्टा-कट्टा था।
इसीलिए मैं सोते से जागा,
नाक की शीध में आया हूँ
लाइसैन्स के काग़जात भी आया हूँ.
मुझे किसी बड़े अधिकारी से
मिलवा दीजिए,
और मेरी असली वाली बंदूक
दिलवा दीजिए,
वैसे अभी रास्ते में
एक मुर्खाब फँसा,
पुलिस का दलाल है,
कहता है,
दो हजार रूपयों का सवाल है।

अगर उससे सौदा पट जाता।

तो मामला निपट जाता। 103

कवि धूर्त बनारसी ने पुलिस विभाग में फैलते हुए भ्रष्टाचार कर्मचारियों के चरित्र को व्यंग्य पंक्तियों द्वारा व्याख्यायित किया है। पुलिस कर्मचारियों का चरित्र पतन की ओर बढ़ता जा रहा है। आज के समाज में इनके खिलाफ आवाज उठाने की ताकत किसी में नहीं है।

उस रात कवि सम्मेलन में हो गई देर।
रास्ते में कुछ पुलिसवालों ने लिया घेर॥
उनकी संख्या थी आठ।
मैंने सुरक्षा की दृष्टि से, शुरु कर दिया, हनुमान चालीसा का पाठ।
कारण, उन पुलिस वालों से, मेरा पुराना था बैर॥
मैं घबराया, सोचा, न जाने कौन सा आया मुहूर्त।
इसी बीच एक बोला, यही है, वो महाकवि धूर्त॥
दीवान ने अपने होठ मीचे और दरोगा बोला, ऊट पहाड़ के नीचे।
और बोला ठहर। मीठी जुबान उगलता है जहर॥
साले मंचो पर गला फाड़ता है, जनता के सामने, रूआब झाड़ता।
और तो और, पुलिस पर ही झण्डा गाड़ता।
कविता के माध्यम से पुलिस को सरकारी दामाद कहकर। कुत्ता बताता।
भोली-भाली जनता को बरगलाता, पहाड़ को तिल, और तिलको पहाड़ बनाता।
हिम्मत है, तो उस लाइन को, एक बार फिर दोहरा दो।
पुलिस पर लगाता है हत्या, डकैती का आरोप, बलात्कार देता है थोप॥
अबे ओ मोई, शक्ल से बंदर, शरीर से गोप, इस वक्त तेरी कविता कहाँ गई लोप।
पुलिस को कहता है कि कमीना हैवान, अबे ओ इंसान की भेष में शैतान॥
कहाँ तक कहूँ। कि तू कितना कर रहा है। अर्नथ, लोगों का समय व्यर्थ।
पुलिस को निकम्मा बतलाता है, और अपने को समर्थ ॥ 104

भारतीय सामाजिक परिवेश भ्रष्टाचार की तरफ तीव्र गति से बढ़ रहा है। समाज में भ्रष्टता, आंतकवाद फैल गया है। आतंकवादी देश के कोने-कोने में व्याप्त है। और हमारा पुलिस विभाग इससे बेखबर है। उसे भ्रष्टाचार बढ़ने की कोई फिक्र नहीं है। इस विभाग के अधिकारी, कर्मचारी अपने कर्तव्यों को भूलकर आंतकवाद को बढ़ावा दे रहे

है। इसकी वास्तविकता आदित्य शर्मा चेतन ने व्यंग्य द्वारा प्रस्तुत की है -

मेरा मित्र मेरे पास आके बोला चेतन जी
एक बात समझ में मेरे नहीं आई है।
वीरअप्पन पत्रकार को तो मिल गया किन्तु।
वहां की पुलिस उसे खोज नहीं पाई है।
मैने कहा- इसमें समझना क्या है,
बुद्धि है तुम्हारी कुंद समझ न पाई है।
अधिकारी वहां पर भ्रष्टाचार में है लिप्त,
पुलिस ने जमकर रिश्वत खाई है। 105

भारतीय समाज में ईमानदारी कहीं देखने को नहीं मिलती है। आज का पुलिस विभाग समाज में विकृतियों को फैलाने में बढ़ावा दे रहा है। इनके चरित्र में ईमानदार और बेईमान एक ही तराजू में तुल रहे है। जो व्यक्ति इन्हें ज्यादा रिश्वत देता है उसी के हित में रहते है। इनके व्यवसाय में भाई-भतीजावाद जान-पहचान रिश्तों को कोई महत्व नहीं मिलता है। इस संदर्भ में कवि शैल चतुर्वेदी ने व्यंग्यकी अभिव्यक्ति की है -

रोजगार दफ्तर की लाइन में
उसने जैसे ही हमारी जेब में हाथ डाला
हमने उसे पकड़ते हुए कहा -
'भाई-साहब नमस्ते।'
वो बोला-
'काहे की नमस्ते
मैं तो आपको नहीं पहचानता।'
हमने कहा -
'मैन पहचान लिया है
आगे की पहचान पुलिस करेगी।'
वो बोला-
'पुलिस को क्या पड़ी है
जो हमारे और आपके बीच में आएगी
जो उसको पटा लेगा,

उसकीतरफ हो जाएगी।'

हमने कहा -

'हमारे मामाजी यहाँ के थानेदार हैं।'

वो बोला -

'आपके मामा होंगे, हमारे यार है।

रिश्तेदारी निभाएंगे

तो बाल बच्चे क्या खाएंगे?' 106

आज के समसामयिक जीवन में धन का इतना प्राबल्य हो गया है कि पुलिस विभाग धन-प्राप्ति हेतु छल-कपट, बेईमानी, झूठ सभी हथकड़ों का प्रयोग करने में लगे है। ये बर्दी का रौब दिखाकर सत्य को भी असत्य बना देते है। और गरीब, ईमानदार, व्यक्ति पर इन्हें कोई तरस नहीं आता है। इनके बदलते हुए चरित्र को देखकर कवि अशोक अंजुम ने व्यंग्य प्रस्तुत किया है -

दरोगा जी।

अपनी खाकी वर्दी का रौब

जनता को दिखाते हो

शर्म नहीं आती

एक-एक केस पर

हजारों कमाते हो

क्या निर्दोष जनता के

अरमानों का लहू बहाने पर

तुम्हारा दिल नहीं रोता?

दरोगा जी हिनहिनाये-

'क्या करे

कन्ट्रोल ही नहीं होता।' 107

भारत में समाज की व्यवस्था को व्यवस्थित रखने के लिये पुलिस विभाग बनाया गया कि भ्रष्टाचार न फैलने पाये। परन्तु आज पुलिस तंत्र से समाज में अत्यधिक भ्रष्टाचार बढ़ता जा रहा है। आज पुलिस तंत्र से समाज में अत्यधिक भ्रष्टाचार बढ़ता जा रहा है। पुलिस कर्मचारियों के कारनामों से आम आदमी को अनेक कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है- इस विषयपर आलोक शर्मा ने व्यंग्य किया है

-

सिपाही को गुस्सा आया और उसनें हमें-
डेढ़ फुट का डंडा दिखाया, हम बोले, भैया
ये शरीर तो आधुनिक शिक्षा की लाश है
बंदे को नौकरी की तलाश है दिन भर का भूखा हूँ
कम से कम रात को तो पचाने दो
वो बोला-कुछ नहीं तो आठ आने दो
नाक में धुएँ की सबब जगी है, मुँह को बीड़ी की तलब लगी है।
हम बोले-हुजूर गुस्ताखी माफ, अपनी जेब है एकदम साफ
बहन की सगाई में जब से माँ के कंगन बिके हैं,
आठ आने तो सपने में भी नहीं दिखे हैं
सिपाही बोला-चुप वे, बिना सिफ़ारिशी चिट्ठी
एक डण्डे में गुम कर दूँगा सिट्टी-पिट्टी
फैमिली बैकग्राउन्ड में घुमाकर
फोकट में टरकना चाहता है सोडा मिला नहीं
और बोतल गटकना चाहता है। 108

सरकारी विभाग :-

भारतीय समाज में सामान्य धारणा यह है कि व्यक्ति को परिश्रम का फल अवश्य मिलता है किन्तु आज की स्थिति ऐसी है कि छल और कपट से किसी के परिश्रम का फल कोई और भोगता है। आज के सामाजिक जीवन में झूठ फरेब, बेईमानी, लूट, इसी का बोलबाला है। सरकारी कार्यलयों की स्थिति ऐसी है कि आम आदमी उससे परेशान हो गया है। आदमी की मृत्यु आ जाये लेकिन सरकारी कार्यालयों में कोई कार्य नहीं हो पाते है। यहाँ पूर्ण रुप से भ्रष्टाचार फैलता जा रहा है। ईमानदार व्यक्ति की यहाँ पर काम करना मुश्किल है। इस बढ़ते हुए भ्रष्टाचार की वास्तविकता कवि सूर्यकुमार पाण्डेय ने व्यंग्य किया है -

कुछ ऊपर वाले की मेहरबानी,
कुछ नीचे वालों की
सिफारिशों का असर,
मैं बन गया,

एक दफ्तर का अफसर।
पहले ही दिन ऐठां-एठां
जब मैं अपनी कुरसी पर बैठा,
खददर का कुर्तापाजामा धारि,
एक सज्ञन कमरे में पधारे।
हर विधि से
लगे जनप्रतिनधि से।
मैं उठकर खड़ा हो गया,
हाथ जोड़कर बोला-
कैसे आए आप?
वे झिझकते हुए बोले
माई बाप।
आपसे पहले वाले साहब
बहुत बजातेथे,
मैने उनसे जोर की बजा दी।
वै बजाना ही भूल गए
और अगले ही दिन
ट्रांसफर के झूले में झूल गए।
एक अफसर की
नियुक्ति हुई है नई,
लंच के बाद
समुचे कार्यालय में खबर फैल गई।
पहले फैलती भी कैसे?
लोग लंच के बाद तो
दफ्तर आते थे।
जो तब भी नहीं पहुँच पाते थे,
वे शाम तक आ ही जाते थे।
शाम साढ़े चार बजे
मैंने कार्यालय का निरीक्षण किया,

सूक्ष्म परीक्षण किया।
वहाँ हर किसी का अपना ठाठ था,
पूरा दफ्तर
अपने आप में पिकनिक स्पाँट था,
फाइलों के ऊपर फाइलें थीं।
फाइलों के नीचे फाइले थी।
बाबुओं के आगे फाइले थी।
मैंने एक से पूछा डरते-डरते-
तुम लोग काम क्यों नहीं करते?
लेते हुए जँबाई,
उसने बात बतलाई
यो नहीं करते
कि काम ही करना होता
तो सरकारी नौकरी क्यों करते?
देखकर दफ्तर के हाल,
मै हो गया बेहाल,
मुख्यालय को पत्र लिखा,
कोई उत्तर आता नहीं दिखा।
बीत गए दो साल,
आधे रह गए सिर के बाल।
मैंने रिमांडर भेजा
हैड़ आँफिस ने उसे भी सहेजा।
एक दिन मै ताव खा गया,
ऊपर वाले सुनते नहीं है,
मैने दो कर्मचारियों को, करदिया सेवामुक्त
तीन को....
एक यूनियन लीडर आए-
बोले-
अब आपका भी, आ गया एण्ड।

साहब।

हम तो इज़्ज़त से निबाहते है,
आप पहले ही बता देते
कि आप ट्रांसपर चाहते हैं।
इतने तनाव की
क्या आवश्यकता थी?
हमें यह बात ही नहीं पता थी
आपको अपना ट्रासपर आर्डर
कल तक मिल जाएगा....।
सच कहता हूँ
उन्होंने मुझे स्थानांतरित करवा दिया।
सुदूर देहात में फिकवा दिया।
उसी दिन से मेरा कार्य- संस्कृति का भूत
उत्तर गया,
मै चला था सुधारने
और स्वयं सुधर गया। 109

आधुनिक युग में व्यक्ति इतना स्वार्थ केंद्रित हो गया है। कि वह अपने कर्तव्यों को भूल गया है। आज सरकारी कर्मचारी आफीसर यह भूल जाते है कि उनका क्या कर्तव्य है। अधिकारी वर्ग अपने कर्मचारियों के घर का काम करवाते है। सरकारी विभाग की वास्तविकता पर कवि नागार्जुन ने व्यंग्य लिखा है -

ऑफिस के वक्त में। ऑफिस की स्टेशनरी पर,
ऑफिस के स्टेनो से। प्राइवेट अनुवाद,
लेख और किताबें लिखी । और को उपदेश,
रात-दिन देते रहो। भ्रष्टाचार निरोध।
अध्यात्मबोध, आत्मशोध पर,
दफ्तर के नौकर लाते, घर फल तरकारी।
दफ्तरके माली करे घर बाग रखवाली,
दफ्तर में क्लर्क वहीं प्रमोशन अधिकारी।
जो घर पर लावे चीनी-राशन,

इसका ही नाम बंधु अनुशासन
इसका ही नाम सफल सेवा अधिकारी। 110

आज के बदलते हुए समाजिक परिवेश में चारो तरफ विकृतियाँ, विद्रूपताओं का समावेश हो गया है। समाज का कोई भी क्षेत्र भ्रष्टाचार से अछूता नहीं रहा । सरकारी विभागों में, झूठ, फरेब, बेईमानी आदि विधमान है। यहां के अफसर दोहरी जिन्दगी जी रहे है। इनका अन्दर लोभ की प्रवृत्ति बढ़ती ही जा रही है। इनकी काली-करतूतों से पूरा देश खोखला होता जा रहा है। इन सरकारी विभागों की परिस्थितियों की वास्तविकता को देखकर कवि डॉ. रामगोपाल सिंहने व्यंग्य पंक्तियाँ द्रष्टव्य की है -

उन्हें रिवोल्विग चेयर पर
अकड़े बैठे / जुगाती करते देख
मुझे अपने गाँव के दिन हरे हो गए,
मेरे पशु धन में / एक ऐसा ही था भैंसा
जो मोटी रस्सी से
खूंटे से बँधा होता था
खूब चरता था।
आसपास की नाँदो में भी मुँह मारता था
और अपना पेट भरता था
फिर खूँटे के चारों और
पगहा का परिधि के वृत्ताकार क्षेत्र में
घूमता / बैठता / अकड़ता / पसरता था
और बिल्कुल ऐसे ही
गलियाया करता था
जैसे ये अफसर खूँटे-सी
रिवोल्विंग चेयर पर
पगहा-सीरिवोल्विग परिधि में
घूमते हैं /पसरते हैं / चरते है
और गलियाया करते है
पर एक अंतर साफ दिखता है
वह जब हरे-भरे खेतों में

पगहा तोड़कर या खूँटा उखाड़कर
नजर बंचाकर / घुसता था
तो पेट भरने पर लौट आता था
पर इन अफसरों का पेट / इतना बड़ा है
पूरा देश इसमें समाने को है
तो भी नहीं भरा हैं। 111

आधुनिक युग में सामाजिक परिवेश में चारों तरफ विकृतियाँ फैल गयी। सरकारी दफ्तरों में कोई भी काम ईमानदारी से नहीं हो रहे है। सरकारी नौकरी करने के बाद व्यक्ति पूर्णतः स्वतंन्त्र हो जाता है। उसे अपने कर्तव्यों की कोई चिंता नहीं रहती है। एक आम व्यक्ति अपने कार्य हेतु सरकारी कार्यालय में ठोकरे खाता रहता है। यहाँ के अफसर चैन की नींद सोता रहता है। सरकारी कार्यालयों की वास्तविकता को अभिराम सत्यज्ञ जयशील ने उजागर किया है -

सरकारी नौकरी देर से जाओ जल्दी जाओ
जब भी चाहे बैठे-बैठे
कुर्सी पर ही तान सो जाओ
रह जायें सब फाइलें
जस की तस सब धरी की धरी
क्या चिन्ता क्या फिक्र दोस्तो
है। जब सरकारी नौकरी। 112

आज के समसायमयिक जीवन में धन का इतना प्राबल्य हो गया है कि धन कमाने की लालच में व्यक्ति झूठ, फरेब, बेईमानी सभी हथकडों का अपनाते है। सरकारी कार्यालयों में बिना रिश्वत के कोई कार्य नहीं होता है। आधुनिक युग में बिना रिश्वत दिये नौकरी मिलना मुश्किल हो गया है। इस संदर्भ में ले सम्राट ने व्यंग्य लिखा है।

दफ्तर में मैंने जाके कहा हाथ जोड़कर,
मुझ दीन को हुजूर कोई पोस्ट दीजियें।
हँस करके, मेरी ओर देखकर कहा हकीम,
पहले जनाब हमको कुछ नोट दीजिये।
चार सौ बीस हर तरफ है हकीम,

दगा, फरेब भी खूब चलता है।
पहले पड़ता था दूध में पानी
अब तो पानी में दूध फलता है। 113

आज सामाजिक जीवन में अनेक विकृतियां, विद्रूपताओं का समावेश हो गया है। कोई भी क्षेत्र भ्रष्टाचार से अछूता नहीं रहा है। सरकारी विभाग में मनुष्य पहुँचते ही पैसे कमाने में लग जाता है वह अपने कर्तव्यों को भूलकर सिर्फ अपनी शरीरिक, आर्थिक वृद्धि कर पाते है। जय कुमार रुसवा ने बदलते वातावरण पर व्यंग्य किया है-

आर्थिक,
शारीरिक,
रुतबाई
क्षेत्रिय, और
घर वृद्धि हुई
अफसर बनते ही
उनकी स्थिति में
उत्तरोत्तर
वृद्धि हुई। 114

कवि मधुप पाण्डेय ने सरकारी विभाग में फैलते हुए भ्रष्टाचार पर व्यंग्य लिखा है। आज के सरकारी निर्माण में बेईमानी होती है। सरकारी निर्माण होने पर आधा माल ठेकेदार और सरकारी कर्मचारी खा लेते है सरकारी विभाग का यथार्थ चित्रण मधुप पाण्डेय ने लिखा -

आपने हमें जो
लड्डू खिलाए हैं-
वे बहुत फुसफुसे बन पाए हैं।
इन लड्डुओं में चरम सुख है।
क्या आप बताएँगे
कि इनका निर्माण किसने किया है ?
वे बोलेः
किस्सा मज़ेदरा है।
मेरा बेटा

सरकारी निर्माण विभाग में ठेकेदार है।
वही बताता है
कि फुसफुसा निर्माण
किस तरह किया जाता है। 115

कवि अल्लड़ बीकानेरी सरकारी विभाग की व्यवस्था को सुचारु रूप से न चलते देखकर इसे व्यंग्य द्वारा प्रस्तुत किया है। इस विभाग में सब एक से बढ़कर एक है। धन प्राप्ति हेतु कर्मचारी छल, कपट, धोखाघड़ी करते है।

गूँगे क्लर्क, अर्दली बहरे
अफसर आँखो का धंधा,
कहाँ आ फँसा उड़ते पंछी
कुतर नौकरी का फंदा
जितने शिष्य बनाये तूने
निकले गुरुघंटाल सभी
खीच रहे है, दोनों हाथो
दो नम्बर का माल सभी।116

आज समाज में चारों तरफ भ्रष्टाचार, विद्रूपतायें व्याप्त है। आज के अफसरों के चरित्र में भ्रष्टता फैलती जा रही है। सरकारी कार्यालयों की वास्तविकता पर काका हाथरसी ने व्यंग्य किया है -

अफसर ऊँचे है वही,
जिनका ऊँचा पेट,
आवे आफिस में सदा, ढाई घंटा लेट। 117

आज आधुनिक जीवन में सिर्फ धन को ही प्राथमिकता दीजाती है। धन कमाने हेतु व्यक्ति अपना ईमान, धर्म खो चुके है। सरकारी माल को कर्मचारी छुपा के बैठ जाते है और गरीब जनता को कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है। इस वास्तविकता को काका हाथरसी ने व्यंग्य द्वारा स्पष्ट किया है -

'मुँह लटकाए' जा रहे, लटकनलाल दलाल,
हमने पूछा क्या हुआ, क्यों है पतला हाल।
क्यों है पतला हाल, कहे क्या तुमसे काका,
राशन वाला खुद राशन पर, डाले डाका।

बोरे चिने हुए चीनी के, देखो जाकर,

लेकिन साफ मना कर दिया, मुँह बिचकाकर।118

वर्तमान समाज में भ्रष्टाचार पूरे समाज में फैलता जा रहेहै। आज के सरकारी विभागों में भ्रष्टता पूर्ण रूप से बढ़ती जा रही है। कर्मचारी अपने सिद्धान्तों को भूलकर सिर्फ पैसा कमाना उनका उद्देश्य है। इनबदलती परिस्थितियों के कारण जनता को अनेंक कठिनाइयों का सामना करना पड़ रहा है और देश खोखला होता जा रहा है। इस संदर्भ में काका हाथरसी का व्यंग्य द्रष्टव्य है-

कलयुग के ईमान की,

बड़ी भयंकर छाप,

जनता जाए भाड़ में माल बटोरे आप। 119

4. न्याय व्यवस्था :-

आधुनिक युग में मनुष्य की समस्यायें बढ़ती ही जा रही है और आज के न्यायलय जिससे व्यक्ति को न्याय की उम्मीद रहती है अन्यायालय में बदल गये है। आज न्यायालयों में सत्य, धर्म, ईमान का कोई महत्व नहीं रह गया है। वहाँ पर पैसा ही सत्य है पैसा ही धर्म है। पैसा ही ईमान है जिसके पास धन की अधिकता है। सिर्फ उसी को न्याय मिल सकता है। आधुनिक न्यायलयों की वास्तविकता को काका हाथरसी ने व्यंग्य पंक्तियों द्वारा द्रष्टव्य किया है -

न्याय और अन्याय का, नोट करो डिफरेंस,

जिसकी लाठी बलवती, हाँक ले गया भैंस।

निर्बल धक्के खाएँ, तूती बोल रही बलवान की,

पर-उपकारी भावना, पेशकार से सीख

दस-रुपए के नोट में बदल गई तारीख

खाल खिंच रही न्यायलय में, सत्य-धर्म-ईमान की। 120

भारतीय समाज में न्याय विभाग मनुष्य को न्याय दिलाने भ्रष्टाचार को रोकने के लिए बनाया गया था। परन्तु आज न्याय विभाग भ्रष्टाचार को बढ़ावा दे रहे है। न्याय विभाग के कर्मचारी न्याय दिलाने की बजाय अन्याय का साथ देते है। इन न्यायालय के कर्मचारियों पर काका हाथरसी ने व्यंग्य किया है -

जिम्मेदारी से बचें, कर्म हीन डरपोक

मान जाउ नहिं कोर्ट, में दावा देगे ठोंक।
दावा देंगे ठोक? नर्क मैनेजर बोले,
स्वर्गलोक के नरनारी होते है भोले।
मान लिया, दावा तो आप जरुर करोगे,
सब वकील है, यहाँ केस किस तरह लड़ोगे। 121

आज की न्याय प्रक्रिया इतनी जटील है। कि इन्सान को न्याय मिलना मुश्किल हो गया है। व्यक्ति का न्याय, अन्याय वकील को हाथों में होता है। जो जितनी ज्यादा फीस देता है। उसे ही न्याय मिल जाता है। आज के वकीलों के सिद्धान्तों की वास्तविकता पर काका हाथरसी ने व्यंग्य किया है -

हे वकील बढ़िया वही,
ऊँचा वहीं कहाय,
जिसकी ऊँची फीस सुन, भाग मुवक्किल जाय। 122

वर्तमान युग में भ्रष्टाचार के कारण समाज का प्रत्येक क्षेत्र वहाँ का वातावरण दूषित हो गया है। न्याय विभाग में व्यक्ति को न्याय मिलना अत्यन्त कठिन है। भारतीय समाज में चारों तरफ़ भ्रष्टाचार व्याप्त है। गरीब जनता को गम खाने के अलावा कुछ नहीं मिलता है। सरकारी कर्मचारी अपना सिद्धान्त छोड़कर सिर्फ झूठी कसमें खाते हैं। न्यायालों की वास्तविकता पर काका हाथरसी का व्यंग्य इस प्रकार है।

दर्प खाय इंसान को, खाय सर्प को मोर,
हवा जेंल की खा रहे, कातिल डाकू चोर।
कातिर डाकू चोर, ब्लैक खाएँ भ्रष्टाजी,
बैंक-बौहरे-वणिक, व्याज खानेमें राजी।
दीन-दुःखी-दुर्बल, बेचारे गम खाते है,
न्यायालय में बेईमान कसम खाते है। 123

काका हाथरसी ने आधुनिक युग की न्याय व्यवस्था न्यायतंत्र की वास्तविकता पर व्यंग्य द्वारा कटाक्ष किया है - दूर-दराज से व्यक्ति मुकदमे के दिन न्यायालयों में आते हैं। उन्हें पूरा-पूरा दिन प्रतीक्षा में बीत जाता है, लेकिन उनकी सुनवाई नहीं होती है अगली तारीख बढ़ जाती है। फिर वही परेशानियों का क्रम शुरु होता है। कभी हूजूर का मूँड नहीं है, कभी उन्हें सिनेमा देखने जाना है। तारीख आगे डाल दी जाती है। मुबक्किल बेचारा अगली तारीख के लिए पेशकार के चक्कर काटता है, लेकिन वह

भी बिना रिश्वत लिये कोई कार्य नहीं करता है और गरीब आदमी को अनेंक कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है।

गए गाँव से कचहरी, करके लम्बा टूर,
डेढ़ बज गया, कोर्ट में आए नहीं हुजूर।
आए नहीं हुजूर, किसीका केस न लेंगे,
क्योंकि आज सरकार मैटिनीशो देखेंगे।
कहँ 'काका' कविराय, नोट दस का सरकाएँ,
पेशकार जी तब अगली, तारीख बताएँ। 124

वर्तमान युग में विसंगतियों का पूर्णरूप से समावेश हो गया है। आज न्याय विभागों में झूठ, फरेब, बेईमानी, छल, कपट ही पूर्णत नजर आता है। यहाँ पर ईमानदारी से कोई सरोकार नहीं रहा है। न्यायलय में धर्म, सचाई ईमानदारी का कोई मूल्य नहीं रहा है। न्याय करने वाले स्वयं भ्रष्ट हो गये है तो गरीब जनता को न्याय कहाँ से मिलेगा न्यायतंत्र के इस दूषित वातावरण पर कवि कैलाश 'गौतम' ने व्यंग्य की अभिव्यक्ति की है -

भले डाँट घर में तू बीबी की खाना,
भले जैसे-तैसे गिरस्ती चलाना।
भले जाके जंगल में धूनी रमाना
मगर मेरे बेटे. कचहरी न जाना।
कचहरी की महिमा, निराली है बेटे
कचहरी वकीलों की, थाली है बेटे
यहाँ पैरवी अब दलाली है बेटे
कचहरी यह गुंडों की खेती है बेटे
यही जिन्दगी उनको देती है बेटे
खुलेआम कातिल यहाँ घूमते हैं
सिपाही दरोगा कदम चूममते है। 125

डॉ. सुनील जोगी ने समाज में फैलती विसंगतियों पर व्यंग्यद्वारा कटाक्ष किया है आज के न्यायतंत्र धर्म, ईमान, अपने सिद्धान्तों को खो दिया है। देश के राजनेता भी अपने कर्तव्यों, सिद्धान्तों को भूल गये है। देश में शासको से लेकर सरकारी कार्यालय न्याय व्यवस्था सभी जगह भ्रष्टाचार ही देखने को मिलता है। समाज में

मानवता का कोई मूल्य नहीं रह गया है।

इक गहरा षड्यंत्र मिलेगा,
न सुभाष, न गांधी होंगे
खादी में अपराधी होंगे
जनता गूँगी बहरी होगी
बेबस कोर्ट, कचहरी होगी
गूंडों को संरक्षण होगा
मानवता का खोल मिलेगा
आने वाली पीढ़ी को।
ढोल के भीतर पोल मिलेगा। 126

आज के न्यायलयों में सत्य, धर्म, ईमान का कोई महत्व नहीं रहा है। भ्रष्टाचार के विरुद्ध न्यायलय में मुकदमा जाता है। और वकील रिश्वत लेकर उसे शिष्टाचारी बना देता है। इन न्याय विभागों में वकीलों की अपने धर्म, ईमान, सिद्धान्त का कोई महत्व नहीं रहा है। उनका धर्म सिर्फ पैसा ही बन गया है। वकीलों की वास्तविकता पर कवि अशोक 'चक्रधर' ने व्यंग्य किया है -

आँखों में चमक
और मुस्कराते होंठ
काला चश्मा, काला कोट,
कैमरे के सामने बड़ी अदा के साथ
वकील साहब ने फोटो खिंचवाया
अगले दिन सबको दिखाया,
सबने कहा-
वाह क्या चित्र है,
हमने कहा झूठा है,
फरेब है।
वकील साहब कैसे खा गए
हमने कहा-
क्रोध मत कीजिए
ध्यान दीजिए

यह चित्र
वकालत की मर्यादा डुबोता है
क्योंकि वकील का हाथ
अपनी जेब में नहीं
दूसरों की जेबों में होता है। 127

समाज में कानून का काम है कि वह व्यवस्था बनाए रखें। लोगों में कानून का भय रहता तो सामाजिक जीवन व्यवस्थित होता। परन्तु आजकल कानून बुराइयों भ्रष्टाचार को ही अपनाता जा रहाहै। यहाँ ईमानदारी के कोई काम नहीं होते हैं। यहाँ रिश्वत, पैसे की ताकत से चोर, डाकू भी सत्ताधीश बन गये है। और आम गरीब जनता को दर-दर की ठोकरे खानी पड़ रही है। आज को अन्याय को देखकर कवि पारदर्शी कवित्त ने व्यंग्य किया है -

अंधा है कानूनी घोड़ा जैसे चाहो वैसे दौड़ा,
जेक-चेक का हथौड़ा बड़ा दमदार है,
छोटे से सजा सुनाई बड़े ने दे दी रिहाई,
चोर भी बिना गवाही बने साहूकार है।
डरे-बिके न्यायधीश वकीलों ने छीनी फीस,
डाकू जहाँ सत्ताधीश न्याय तोलापार है,
पारदर्शी कहाँ जाएँ किसे दुखड़ा सुनाएँ,
'सत्यमेव जयते' से उठा ऐतबार है। 128

आज समाज में बढ़ते हुए भ्रष्टाचार पर कवि डॉ. मोहदत्त साथी ने व्यंग्य द्वारा कटाक्ष किया है। आधुनिक युग में न्यायालय भ्रष्टाचार को रोकने की बजाय और बढ़ावा दे रहे है। भ्रष्टाचार और आतंक पूरे देश में फैलता जा रहा है। और अन्याय को रोकने वाले न्याय विभाग के वकील चुपचाप खड़े देख रहे हैं -

फिर कोई लड़का किसी का
या कोई दामाद।
आप मानें या न मानें
फँस गया उस्ताद।
देर तक इस बात पर
संसद चली।

मच गई कुल मुल्क में
ही खलबली।
कम न हो जाए लुटेरों
की कही तादाद।
हो रहे इस देश में हैं
इसलिए विस्फोट।
क्योंकि खूँटी पर टँगे हैं
आज काले कोट।
न्याय की तलवार थामे
हैं खडे जल्लाद। 129

आधुनिक युग की न्याय प्रक्रिया इतनी जटिल हो गयी है। कि यहाँ पर न्याय मिलना मुश्किल हो गया है। कानून का काम है न्याय दिलाना परन्तु यहाँ तो भ्रष्टाचार को बढ़ावा दिया जा रहा है। समाज में आतंक बढ़ता जा रहा है। आज की न्यायपालिका का धर्म सिर्फ पैसा कमाना है। पैसे की लालच में आकर यहाँ बेकसूर को सजा मिलती है और कसूरवार बा-इज्जत रिहा होता है। इस संदर्भ में कवि मदन गोपाल कार्तिक का व्यंग्य द्रष्टव्य है-

सुनिए
अब हम हो गए है
सभ्य और समझदार
भाई को भाई से लड़ाकर
खड़ी कर दी है दिलो में दीवार,
एक ओर हम
भीड़ को उकसाते है।
कानून-व्यवस्था के नाम पर
गोलियाँ चलवाते हैं,
अंत में मुआवजे के साथ
सांत्वना देने पहुँच जाते हैं।
अब भी आपको
कोई शक है श्रीमान तो और सुनिए

हमारी न्यायपालिका की दास्तान,
बेकसूर को सजा दिलवाते हैं
चाँदी के चंद टुकड़ो में
कुसूरवार साफ बच जाते हैं। 130

भारत में समाज व्यवस्था को संतुलित बनाये रखने के लिये। न्याय विभाग बनाया गया। परन्तु आज की न्याय व्यवस्था में अनेंक विकृतियों, बुराइयों का समावेश हो गया है। समाज में भ्रष्टाचारी चोर, डाकू, कत्ली खुले आम घूम रहे है। आतंकवादियों के कारनामें रोज सुननें को मिलते है और हमारी न्याय पालिका चुप बैठी है। इस संदर्भ में अशोक चक्रधर का व्यंग्य द्रष्टव्य है -

सामने खड़ा था स्टाफ समूचा
आई.जी. ने रौब से पुछा-
पाँच सातिर बदमाशों के
चित्र मैंने भेजे,
कुछ किया या सिर्फ सहेजे?
इलाके में
हो रही हैं वारदातें,
'क्या कर रही है पुलिस'
ये होती है बातें।
रोजमर्रा जिन्दगी में
बढ़ रहे हैं खतरे,
और खुलेआम घूम रहे हैं
जेबकतरे।
चोरी, डकैती
सेंघमारी, जेबकतरी
सिलसिला बन हाथा है रोज का,
क्या किया उन फोटोज का?
सिर झुकाए खड़ा था,
स्टाफ सारा,
आई.जी. ने हवा में

बेंट फटकारा-
कोई जवाब नहीं दिया,
बताइए
उन फ़ोटोज का क्या हुआ?
इस तरह सिर मत झुकाइए,
क्या किया है बताइए।
वो उचक्के
पूरे शहर को मूंड रहे है
एक थानेदार बोला
सर।
तीन फ़ोटो मिल गए हैं।
दो फोटो ढूँढ़ रहे है। 131

आज के न्यायालयों में सत्य, ईमान, धर्म की कोई जगह नहीं रही गयी है। आज के न्यायलय का सिद्धान्त, ईमान सिर्फ पैसा ही है। पैसो के लिए न्यायलय में बेगुनाह को सजा हो जाती है। और गुनाहों को बा-इज्ज़त बली करा दियाजाता है। आज के न्यायलय अन्यायालय बन गये है। इस विषय पर कवि शिवराम ने व्यंग्य प्रस्तुत किया है -

बीच बाजार/एक चौराहे पर
दिन दहाड़े / हुआ था कत्ल
कातिल आज हो गया
बरी बाइज्ज़त
न्यायालय के पास न कोई गवाह था
न कोई सुबूत
आज शाम साथ-साथ पिएँगे
कातिल और पुलिस वाले। 132

आधुनिक युग में न्यायालय में भ्रष्टाचार का इतना अधिक समावेश हो गया है। कि यहाँ पर ईमानदार व्यक्ति पहुँचकर ठोकरें खाता फिरता है। और बेईमान व्यक्ति को सफलता प्राप्त होती है। बेईमान व्यक्ति के लिए धर्म, ईमान का कोई महत्व नहीं है। वह अपने स्वार्थ के लिए झूठी कसमें खाते फिरते है। आज के युग में भ्रष्टाचार का ही

बोलबाला है इस संदर्भ में कवि कृष्ण 'सौमित्र' ने व्यंग्य किया है -

पग-पग पर छलते रहे, हमको दीन ईमान।
दूध मलाई खा गए मिलकर बेईमान।।
कविवर मिलकर बेईमान।
राम नाम की आड़ ले माया का कर जाप।
बेईमानी सीख ले धुल झायेगें पाप। कविवर मिलकर...
कसमें खाकर सत्य को देते झूठे बयान।
रोते रहते कोर्ट में गीता और कुरान।। कविवर मिलकर...
सभी पुजारी रुप के निर्दन और धनवान।
पूजा में पूजा बड़ी पूजा भर श्रीमान।. कवि....
अफसर आये पास जब दण्डवत कर प्रणाम।
चमचागीरी सीखकर, दिन भर का आराम। कविवर... 133

आज के न्यायालयों में ईमानदार व्यक्ति को न्याय मिलना मुश्किल हो गया है। न्याय के लिये उसे कचहरी के दरवाजे पर बार-बार भटकना पड़ता है। जो बेईमान व्यक्ति होता है। वह रिश्वत देकर न्याय को अपने पक्ष में कर लेता है। आज का न्याय पैसे के तराजू में तुल गया है। इसकी वास्तविकता पर कवि राजीव सक्सेना ने व्यंग्य किया है -

अपराध बढ़ता रहा
जाँच कमेटी बनती रही
आपकी जाँच में सिर्फ
तारीखें पड़ती रहीं
पैसा लुटा, न्याय भटकता रहा
निर्णय आया कि अपराधी बेकसूर है
क्योंकि सबूत पर्याप्त नहीं है। 134

न्याय विभाग में न्याय दिलवाने वाले वकीलों का चरित्र पूर्णतः भ्रष्ट हो गया है।ये समाज में सभी को समान रूपसे देखते है। जिनसे रिश्वत मिलती है। उसी के पक्ष में रहते है। और अपना कर्तव्य पूरा करते है इनके चरित्र पर कवि देवेन्द्र श्रीवास्तव ने व्यंग्य की अभिव्यक्ति की है -

वे वरिष्ठ है, अनुभवी हैं

वकालत के पेश में
विलक्षण बुद्धि के धनी हैं
जज, हाकिम सभी के
समान रूप से आदरणीय हैं
जब वे किसी जज या हाकिम
के पास जाते है तो
पहले नामा पेश करते हैं,
और फिर वकालत बखानते हैं
इस तरह औपचारिकता की
अपनी विलक्षण बुद्धि से निभाते हैं। 135

आधुनिक युग में भ्रष्टाचार इतना बढ़ गया है. कि न्यायलय भी पैसों से बिक गया है। जो व्यक्ति अधिक धन देने लायक होते है। न्याय उन्हीं के हाथों में जाता है। इस वास्तविकता पर डॉ. गोपाल बाबू शर्माने व्यंग्य लिखा है -

केसर की खुशबू घायल है,
आज बिछे अंगार कबीरा।
जिसकी लाठी, भैंस उसी की,
न्याय हुआ लाचार कबीरा। 136

आजका न्याय अंधा हो गया है। गरीब इंसान न्यायालय में न्याय मिलने की उम्मीद से जाता है। परन्तु वहाँ पर उसे निराशा ही मिलती है और गुनहगार व्यक्ति धन का सहारा लेकर निडर घूमता है। इस बढ़ते हुए भ्रष्टाचार पर गोपाल बाबू शर्माने व्यंग्य किया है -

मान बैठे थे इसे अपना नगर,
पर यहाँ तो भेड़िए आए नज़र।
आज का कैसा अजब कानून है,
खून करके आदमी घूमे निडर। 137

आज न्याय के क्षेत्र में अनेक भ्रष्टाचार बढ़ते जा रहे है। न्यायालय में न्याय मिलना मुश्किल हो गया है। आज का न्याय पैसों से बिक गया है, इस संदर्भ में खालिद हुसैन सिददीकी ने व्यंग्य लिखा है -

न्यायमंदिर में

नोट सीधे चढ़ने लगे
अपराध बढ़ने लगे
आंकड़े चढ़ने लगे। 138

4 : सांस्कृतिक और समाज की विविध असंगतियों को लक्ष्य करके हास्य-व्यंग्य कविताओं का मूल्यांकन :

1. सांस्कृतिक मूल्यों का पतन : आधुनिक युग में बदलते हुए परिवर्तन के साथ-साथ मनुष्य के जीवन के मूल्य भी परिवर्तित होते जा रहे है। आज की युवा पीढ़ी पाश्चात्य सभ्यता को अपनाना अपने जीवन का ध्येय बनाये हुए है। पहले के मनुष्य हर वक्त भगवान को याद किया करते थे। पर आज की बदलती हुई सांस्कृति में युवा पीढ़ी हर समय फिल्मी गानों को गाना पसंन्द करेगी। आज की इस वास्तविकता पर कवि काका हाथरसी का व्यंग्य इस प्रकार है -

पापा से कहने लगा, बेटा रामप्रताप,
बाथरूम में फिल्म के गीत गायँ क्यों आप।
गीत गायँ क्यों आम, मिला उनसे यह उत्तर
बतलाता हूँ इसका कारण प्यारे पुत्तर।
बाथरूम अंदर से बंद नहीं हो पाता,
कोई आए नहीं, इसलिए गाने गाता। 139

भारतीय समाज में आधुनिक युवा पीढ़ी को फिल्मों का भूत सवार हो गया है। वह अपनी भारतीय संस्कृतिक को भूलकर पाश्चात्य संस्कृतिक को स्वीकार करना चाहती है। आज की पीढ़ी पढ़ना-लिखना छोड़कर फिल्मी बाह्य चीजों की तरफ अधिक प्रभावित है और समाज में सांस्कृतिक मूल्यों का पतन होता जा रहा है -

पढ़-पढ़कर पत्थर हुए, गुनगुन कर कमजोर,
चढ़ जा बेटे छत्त पर, ले पतंग और डोर।
ले पतंग और डोर, दनादन पेच लड़ावै,
पानी अच्छा लगे न, उसको रोटी भावै।
जब-जब प्यास लगे, तो पाए सिगरेट-बीड़ी,
ऐसा पूत-सपूत तार दे सातों पीढ़ी। 140

हमारे भारतीय समाज में अंग्रेजी सभ्यता का प्रवेश हो गया है। आपसी सम्बन्धों का कोई महत्त्व नहीं रह गया है। आज सम्बन्धों में कोई स्थिरता नहीं है।

आज की युवा पीढ़ी में दिखावा कुछ है वास्तविकता और कुछ है। भारतीय समाज के बदलते हुए वातावरण पर कवि काका हाथरसी ने व्यंग्य किया है -

लड़के को कहती रही, लड़की भाई साब,
प्यार प्रीति के बढ़ रहे, दोनों में सद्भाव।
दोनों में सद्भाव, हो गई लड़की स्यानी,
लड़का हुआ जवान, जवानी बड़ी दिवानी।
रिश्ते हो गए चेंज, लगा मन जिसका जिसमें,
पति-पत्नी बन गए, पाप नहि कुछ भी इसमें। 141

आधुनिक युग का समाजिक परिवेश पाश्चात्य संस्कृति की तरफ आकर्षित हो रहा है। पुराने समय में लोग अपने बच्चों के जन्मदिवस पर भजन गाते है दान देते थे परन्तु आज लोग डान्स पार्टीया रखकर लोगो को बुलाकर पार्टी के बाद पैसों के लिफाके इकट्ठा करते है। भारतीय संस्कृति पूँणतः लुप्त हो गयी है। सांस्कृतिक मूल्यों के पतन को देखकर काका हाथरसी ने व्यंग्य किया है।

जन्म-दिवस के जश्न पर, क़ाका करी रिसर्च
सालगिरह पर गिरह से, कुछ नहि होता खर्च।
कुछ नहि होता खर्च, तोहफे चमचे लाएँ
अफसर जी को नोट, लिफाफे में दे जाएँ।
दावत खत्म हुई, साहब ने जोड़ लगाया,
जितना पैसा लगा, दस गुना उससें पाया। 142

आज की युवा पीढ़ी भारतीय संस्कृति को भूलकर पाश्चात्य संस्कृति को अपना ध्येय बनाये हुए है। समाज में पाश्चात्य सांस्कृति का प्रभाव फिल्मो के द्वारा अधिक फैल गया है। इस विषय पर काका हाथरसी ने व्यंग्य किया है।

छैल-छबीली नायिका, मारे तुमको आँख,
उसका हृदय टटोलिए, अंतरपट में झाँक।
अंतरपट में झाँक, सुनो मिट्ठी वे माघो,
एक आँख वह मारे, तुम दोनों मिचका दो।
सुदरियों से सावधान ही रहना बेटा,
चूक गए तो तुम्हें बना, देंगी करकेटां। 143

भारतीय समाज में पाश्चात्य संस्कृति का प्रभाव तीव्र गति से हो रहा है। पहले

के समय में मेहमान के आने पर दरवाजें पर स्वागत किया जाता था। परन्तु आज दरवाजों पर कुत्तों से सावधान लिखा मिलता है और आने वाला मेहमान डर जाता है। बदलती हुई भारतीय संस्कृति को देखकर काका हाथरसी ने व्यंग्य किया है -

हमने सोचा था मुलाकात कर लें
कोठी में होगें श्रीमान
शरीफ इंसान
फाटक पर बोर्ड देखा-
'कुत्तों से सावधान'
मन ही मन बहुत पछताए
जैसे गए थे वैसे ही लौट आए
हमको क्या मालूम था कि यहाँ आदमी नहीं कुत्ते रहते है
लौटते हुए हमारी गंध कुत्तों तक पहुँच गई
वे भौकने लगे,
क्योंकि हम अजनबी थे
कुत्ते अनुभवी थे। 144

भारतीय समाज में युवा पीढ़ी पाश्चात्य संस्कृति को अपनाने के साथ-साथ उनकी मानसिक प्रवृत्ति भी बदलती जा रही है। आज की पीढ़ी को भारतीय संस्कृति को अपनाने वाले लोग अच्छे नहीं लगते है। भारतीय संस्कृति के बदलते हुए मूल्यों पर काका हाथरसी ने व्यंग्य किया है।

मेरे अच्छे डैडी
मै सच कह रही हूँ
मैं इस लड़के से शादी नहीं करूँगी
इससे तो बेहतर है
मै पड़ोस के कुएँ में जाकर डूब मरुंगी।
आपसे किसने कह दिया
कि यह मुझे भाता है
य़ह तो सज्जनों की तरह
टोपी लगाता है
जैसे किसी गाँव का मुकद्दम है।

यह थियेटर, डाँसिग क्लब
या पार्टियों की जिन्दगी जी नहीं सकता
धुएँ के छल्ले निकालना तो दूर
यह सिगरेट भी पी नहीं सकता।
सिनेमा घर कहाँ है यह नहीं जानता
यह किसी एक्टर तक को नहींजानता
मैं जिन्दगी-भर
कैसे बनी रहूँगी इसकी
यह न ताडी पीता है, न विहस्की।
मुझे तो अगर कोई, सच्चे अर्थो में आदमी मिलेगा
तो उससे शादी करुँगी। 145

आज की युवा पीढ़ी ने भारतीय संस्कृति को भुलाकर पाश्चात्य सभ्यता को अपना लिया है। आज के युवक जैसा फिल्मों में देखते हैं वैसा ही करते हैं। लड़कें-लड़कियाँ अपने कर्तव्य की ओर सजग न होकर बाग-बगीचों में घूमते है। समाज के बदलते हुए सांस्कृतिक मूल्यों पर काका हाथरसी ने व्यंग्य किया है-

घूम रहे है पार्क में, डाल गले में हाथ,
नशा इश्क का चढ़ रहा, सुंदर प्रेयसि साथ।
बाते करना दूर, आँख भी नहीं मिलाए,
पूछें कोई साथ किसे लाए हो मिस्टर?
बदला देगें उसको साली अथवा सिस्टर। 146

भारतीय समाज में पुराने समय में लड़कियों को असहाय माना जाता था। उनकी जहाँ शादी की जाती थी। वही पर चली जाती थी। परन्तु आज के जमाने में लड़कियाँ इतनी शिक्षित है कि शादी करने का अधिकार वे स्वयं अपना समझती है। इन बदलते हुए सांस्कृतिक मूल्यों की वास्तविकता पर 4काका हाथरसी ने व्यंग्य की अभिव्यक्ति की है।

बीत गया वह जमाना, जब थी वे असहाय,
क्वारी कन्या उन दिनो, समझी जाती गाय।
समझी जाती गाय, बिचारी शर्माती थी,

सौंप दिया जिसको, चुपचाप चली जाती थी,
अब शिक्षित होकर, विवेक से निर्णय लेती,
अयोग्य लड़के को, फौरन रिजैक्ट कर देती। 147

भारतीय समाज में ज़ो संस्कृति सभ्यता पुराने समय में थी वह अब समाप्त हो गयी है। आजकल के लड़के पाश्चात्य संस्कृति की तरफ अधिक आकर्षित हो रहे है। और अपने कर्तव्यों को भूल जाते है। जिससे उन्हें पछताने के सिवा कुछ नहीं मिलता। समाज में बदलते हुए परिवर्तन पर काका ने व्यंग्य पंक्तियाँ लिखी है -

लड़के घरके लाड़ले, उन पर नहि कंट्रोल,
पढ़ने लिखने से बचे, करतें टालमटोल।
करते टालमटोल, फिल्म के गाने -गाते।
इम्तिहान के समय, नकल में अकल लगाते।
किंतु लड़कियाँ-पढ़-लिखकर, उन्नति कर जाती,
टी.वी. टेलीफोन, बैंक में सर्विस पाती।
बीबी अफसर बनी, जब-जब दफ्तर जायँ
बाबू जी घर में रहें, बच्चों को बहलाये। 148

समाज में युवा पीढ़ी अपने रीति-रिवाज संस्कृति को अपनाना हीन भावना का अनुभव करती है और पाश्चात्य संस्कृति को स्वीकार करने में गर्व समझती है। आज के लड़के-लड़कियाँ अपने माता-पिता के अनुसार नहीं चलना चाहते है। माता-पिता को अपने अनुसार चलाना चाहते है। समाज के बदलते हुए सांस्कृतिक परिवर्तन पर कवि काका हाथरसी ने व्यंग्य किया है -

होती है नित गुफ्तगू, खड़के टेलीफोन,
दोनों दिलजब मिल गए, रोक सकेगा कौन
रोक सकेगा कौन, व्यर्थ क्यों टाँग उड़ाओं,
रोड़ा बनकर लुढ़कों, संकट में पड़ जाओ।
दखलंदाजी छोड़ मान, लो उनका कहना।
वरना करें कोर्ट मैरेज, आप पछताते रहना। 149

भारतीय समाज में पहले की नारी जिस वेष-भूषा में और बंधनों में रहती थी। उस वातावरण में आज की शिक्षित नारी को रहना पसंद नहीं है। आधुनिक युग के बदलते हुए सांस्कृतिक मूल्यों पर काका ने व्यंग्य द्वारा प्रस्तुत किया है-

अकल आ गई नारि को, युगों-युगों के बाद
आभूषण दूषण समझ, आज हुई आजाद।
आज हुई आजाद, उच्चतम शिक्षा पाकर,
किया मर्द पर कब्जा, उसे बनाया चाकर।
किया मर्द पर कब्जा, उसे बनाया चाकर।
घर की मालिक बनी, कि जो कल तक थी दासी,
पत्नी अफसर बनी, बने पतिजी चपरासी। 150

आज की युवा पीढ़ी फिल्मों की तरफ अधिक आकर्षित होती जा रही है। युवा पीढ़ी अपनी सभ्यता, संस्कृति को भूल गई है। आधुनिक युग में घरों में गाय पालने की जगह कुत्ता पालने की प्रथा चलने लगी है। इस बदलती हुई संस्कृतिक से प्रभावित होकर युवा पीढ़ी की सोच बदल गयी है। इस वास्तविकता पर काका हाथरसी ने व्यंग्य किया है।

खाली है रोमांस को, फेमस फिल्मस्टार,
तीन लाख का फ्लैट हो, एक लाख की कार।
एक लाख की कार, होय इतने ही गहने,
दो अल्स्येशन कुत्ते, हों तो फिर क्या कहने।
गर्व-गुमान नाज नखरा सब सहना होगा,
प्रेमी-कम-सेवक बन करके रहना होगा। 151

आज की युवा पीढ़ी की बदलती हुई मानसिक प्रवृत्ति, सांस्कृतिक मूल्य को देखकर काका हाथरसी ने व्यंग्य द्वारा कटाक्ष किया है। कि आज की पीढ़ी की पत्नी को बंधन में रहना पसंद नहीं है। वह स्वतंत्रता से रहना पसंन्द करती है -

सौदा लाने में बजार से,
कभी लेट तुम हो जाओगे।
चूल्हे पर तलाक का नोटिस,
लिखा हुआ रक्खा पाओगे।
चौराहे पर जाकर देवी,
दही-बड़े की चाट खाएगी।
दखल जरा भी दोगे ''काका''

तो वह तुमको काट खायेगी।

क्लब में जाकर डांस करेगी,

उसे हास-परिहास चाहिए। 152

आधुनिक युवा पीढ़ी अपने संस्कारों और सभ्यता को छोड़कर पाश्चात्य सांस्कृतिक की तरफ अधिक आकर्षित होती जा रही है। पहले समय में बच्चे अपने माता-पिता का आदर सम्मान करते थे। उनके सामने गलत कार्यो को नहीं करते थे। परन्तु आज की युवा पीढ़ी अपने-माता-पिता के सामने सिगरेंट पीना इनकी सभ्यता में आ गया है। समाज में बदलते हुए सांस्कृतिक मूल्यों पर काका हाथरसी ने व्यंग्य है किया है -

गोरी काली कुछ सही, हो वह अपटूडेट,

सास-ससुर के सामने, पीती हो सिगरेट। 153

भारतीय समाज अंग्रेजी दासता से मुक्त होने पर भी अंग्रेजी सभ्यता का रंग दिन-पर दिन गहरा होता जा रहा है। भारतीय संस्कृति के अनुसार लोग मेहमानों के आने पर खुश होकर गलें मिलते थे। और जाने पर सम्मान सहित पैर छूते थे परन्तु आज की पीढ़ी केवल हाथ हिलाना सीख रही है। बदलते हुए सांस्कृतिक मूल्यों पर काका हाथरसी ने व्यंग्य द्वारा यथार्थ प्रस्तुत किया है -

हाथ मिलाकर दिखाया, टैम्परेरी प्यार,

हाथ हिलाकर कह रहे, अब मत आना यार। 154

पाश्चात्य सभ्यता का एक और प्रभाव करती है। आज भारतीय नारी के रीति-रिवाज संस्कृति के अनुसार सुहागिन नारी को श्रृंगार में जैसा रहना चाहिए वह भूल गई है। भारतीय समाज के सांस्कृतिक मूल्यों के पतन को देखकर काका हाथरसी ने व्यंग्य किया है -

भूल गये निज सभ्यता, बदल गया परिधान,

पाश्चात्य रंग में रंगी, भारतीय सन्तान।

भारतीय संतान हो रही माता हिन्दी,

आज सुहागिन नारी, लगाना भूली बिन्दी।

कहँ काका कवि बोले बच्चों डैडी-मम्मी,

माता और पिता कहने की प्रथा निकम्मी। 155

आज समाज में सांस्कृतिक मूल्यों को बदलते हुए देखकर काका हाथरसी ने

व्यंग्य किया है। पहले के लोग त्योहारों के सुख, शांति का प्रतीक मानते थे। एक-दूसरे से मिलते थे। परन्तु आज त्योहार का गलत प्रयोग होने लगा है। धीरे-धीरे अपनी संस्कृति और सभ्यता का पतन होता जा रहा है।

काका होली खैलिए, तजकर रंग-गुलाल,
लाल आँख, मुँह ब्लैक हो, गल जूतों की माल।
गलजूतो की माल, चढ़ई बोतल ठर्रा,
बाप दंडवत् करे, देख बेटा का ढ़र्रा।
गंदे गाने गाकर, गर्दभ स्वर में रेंके,
मिले मार्ग में, उन पर गोबर कीचड़ फेंके। 156

भारतीय समाज में सभ्यता, संस्कृति, नियम थे। जिसके अनुसार मनुष्य चलते थे। परन्तु आजकल तो पुराने सांस्कृतिक मूल्यों को युवा पीढ़ी ने मानना छोड़ दिया है। जिससे उसे अनेंक कठिनाइयों ना सामना करना पड़ता है। विवाह जो एक संस्कार के रूप में माना जाता था। आज उसे युवा पीढ़ी ने खेल बना दिया है। समाज के सांस्कृतिक मूल्यों के पतन को देखकर काका हाथरसी ने व्यंग्य किया है:

लग्न शोध के कार्य में, देखें अलग उसूल,
पश्चिम में जो हो रहा, उस पर डालों धूल।
उस पर डालो धूल, आज कर डाली शादी,
कल तलाक दे दिया, बने वादी-प्रतिवादी।
घड़ी-मुर्हूत दिखाकर, हमने ब्याह किया है,
इसीलिए काकी ने अब तक साथ दिया है। 157

भारतीय समाज में प्रचीन काल से अनेंक रीति-रिवाज प्रथायें चली आ रही है। इन प्रथाओं को लोग मानकर गर्व का अनुभव करते थे। परन्तु आज की पीढ़ी उन्हें मानकर अपनी तौहीन समझती है। इस परिवर्तन पर काका हाथरसी ने व्यंग्य किया है -

सभी पुरानी प्रथाएँ, बदल चुकी है आज,
घूँघट-पर्दा क्यों करें, शिक्षित हुआ समाज।
शिक्षित हुआ समाज, दुपट्टा सिर से खिसका,
नंगे सिर जा रही, न कोई खतरा खटका।
जाता जब दूल्हा अपनी, दुल्हिन के घर पर,

टोपी या पगड़ी, देखोगे उसके सर पर। 158

भारतीय समाज में पहले मनुष्यों में आपस में प्रेम, सद्व्यवहार ईमानदारी का भाव था। सम्बन्धों को जीवन भर निभाते थे। परन्तु आजके युग में झूठ-फ़रेब, बेईमानी, छल, कपट को मनुष्य ने अपना लक्ष्य बना लिया है। आज का मनुष्य दिखावा कुछ और करता है। उसकी वास्तविकता कुछ और होती है। समाज मे बदलते हुए सांस्कृतिक मूल्यों पर काका हाथरसी ने व्यंग्य किया है -

बात कहें मुँह सोहती, बनकर जिगरी यार,
मन के भीतर द्वेष है, मुँह के ऊपर प्यार।
मुँह के ऊपर प्यार, अहिंसा के अवतारी,
सत्यपाल कहलाएँ, किंतु है भ्रष्टाचारी।
तुलसी की माला, मस्तक पर तिलक जमाए
रखते 'मुँह में राम बगल में छुरी' दबाए। 159

पाश्चात्य संस्कृति के प्रभाव के कारण समाज में युवा पीढ़ी की सोच मानसिकता बदल गयी है। विवाह जैसे सामाजिक संस्कार को एक खेल के रूप में समझते हैं। इसका कोई महत्व नहीं रहा है। समाज के सांस्कृतिक मूल्यों के पतन देखकर काका हाथरसी ने व्यंग्य किया है -

ऐक्सपीरियन्स ब्याह का, क्यों पूछे श्रीमान,
वाकिफ पहले से सभी, क्वारे युवा जवान,
क्वारे युवा जवान, होय अनपढ़ या इल्मी,
सबसे ज्यादा अनुभव, रखते एक्टर फिल्मी।
आज करी एक शादी, कल तलाक दे दिया,
इक दिन में शादी का ऐक्सपीरियन्स ले लिया। 160

आज की युवा पीढ़ी अपनी संस्कृति, सभ्यता को त्यागकर फिल्मों का अनुसरण करने में लगी है। फिल्म स्टार जैसा करते है उसी को अपने जीवन में उतारते है। आज की युवा पीढ़ी की मानसिकता पाश्चात्य सभ्यता के रंग में रंगी हुई है। ईश्वर पर विश्वास करना छोड़ दिया है। और फिल्मी सितारों के पदचिन्हों पर चलते हैं। समाज में सांस्कृतिक मूल्यों का पतन देखकर काका हाथरसी व्यंग्य लिखते हैं -

इन फिल्मी देव-देवियों की,

पूजा से पीछे मत हटना।
तू राम-कृष्ण को छोड़,
नाम हीरो-हीरोइन के रटना।
सात पुश्त तर जाएँगी,
यह काका का वरदान सखे।
कुछ मेरी भी तो मान सखे। 161

भारतीय समाज में सांस्कृतिक सभ्यता का पतन तीव्र गति से हो रहा है। आज की युवा पीढ़ी भारतीय सभ्यता के अनुसार नमस्ते, पैर छुना भूल गई है। चुंबन के माध्यम से अभिवादन करना उच्च समझने लगी है। समाज के इन सांस्कृतिक मूल्य पतन पर काका हाथरसी ने व्यंग्य किया है -

नमस्कार या नमस्ते का, अब क्या है अर्थ?
यह ठकोसला, 'खोखला' कर डालेंगे व्यर्थ।
कर डालेंगे व्यर्थ, साथ फिल्मों के चलिए,
चुंबन के माध्यम से ही अभिवादन करिए।
'काका' युवक -युवतियों में यह भर दो,
न्यू लाइट से भस्म पुरानी पीढ़ी कर दो। 162

आधुनिक युग में सांस्कृतिक मूल्यों का पतन तीव्र गति से हो रहा है। आधुनिक पीढ़ी पुरानी की तुलना में निराशामय, संघर्ष का जीवन व्यतीत कर रही है। पहले पीढ़ी के लोग बड़े वृक्ष की तरह विशाल छाया प्रदान करने वाले थे। परन्तु आज के लोग सिर्फ दुःखों को इकट्ठा करते है। आज के लोग थोड़े से जीवन में सब कुछ पा लेना चाहते है। आज के मनुष्य अपनी हकीकत को भूल गये है। आज के लोगों में प्रेम व्यवहार नहीं रह गया है। सांस्कृतिक मूल्यों का पतन अति शीघ्र गति से हो रहा है। इस वास्तविकता को देखते हुए डॉ. किशोर काबरा ने व्यंग्य द्रष्टव्य किया है-

पुरानी पीढ़ी के लोग
दरिया की तरह जीते थे
सौ घूँट पिलाते थे,
दो घूँट पीते थे।
आज की पीढ़ी
बरसाती रेले की तरह लुड़कती है

वह
सपाट समझौते वाली तन की भूख
और खुरदरे अस्तित्ववादी मन की प्यास
एक ही किनारे पर शान्त करना चाहती है।
कल की पीढ़ी का दृश्य
वृक्ष जैसा था
जो नीचे-ऊपर दोंनो तरफ फैलता-फलता था।
आज की पीढ़ी का दृश्य
बरामदे में लटके कंदिल की तरह है
जो ऊपर-नीचे को छोड़कर
बाकी सब दिशाओं में गति कर सकता है।
जमाने की दौड़ उसकी नियति है,
दौड़ का जमाना उनका नियन्ता है।
उसमें है
थोड़े -से जीवन में सब कुछ पा लेने की
आपाधापी और भगदड़
एक कभी समाप्त न होने वाला क्यू।
पहले
पैसे खर्च करके हम अनुभव खरीते थे,
अब
अनुभव बेचकर पैसे खरीदते है।
पहले
नीली आँखों में
करुणा की किश्ती तैरती थी,
अब
हमारे सफेद बुरकि हाथों में
लम्बी-चोड़ी व्यभिचार रेखाएं
तैर रही है,
पहले

बन्धन में कितना सुख था।
अब सुख में बन्धन है।
पहले सुख झील की तरह ठहरा हुआ था,
अतः नजर आता था
अब
सुख बर्फ की तरह गलता रहता है। 161

आज की युवा पीढ़ी अपनी संस्कृति, सभ्यता को त्यागकर पाश्चात्य सभ्यता को अपना रही है। आज की पीढ़ी में देश के प्रति कोई जागरुकता नहीं है। अपनी मस्ती में डूबे हुए है। इन बदलते हुए सांस्कृतिक मूल्यों पर कवि आदित्य शर्मा चेतन नें व्यंग्य किया है -

आज
शहर के छविग्रहों का
अजीब हाल था।
'देशप्रेमी' वाला खाली-
'रेशमा की जवानी'वाला
फुल हाल था।
यह रुचि का बदलाव
देश को किधर ले जायेगा?
भविष्य में,
देश वाशियों से क्या पायेगा? 162

आधुनिक युग सांस्कृतिक मूल्यों का पतन तीव्र गति से होते देखकर कवि अरूण जैमिनी ने व्यंग्य किया है कि आज की पीढ़ी पुरानी पीढ़ी की तुलना में स्वार्थी प्रवृत्ति की हो गयी है। आज के लोग दूसरों का दुःख देखकर खुश होते है। आज की पीढ़ी पड़ोसी को सुखी नहीं देखना चाहते है। समाज में मनुष्य में आपसी सम्बन्ध, प्रेम, हमदर्दी समाप्त हो गई है-

एक रात जब मैं
कवि-सम्मेलन से घर आया
तो दरवाजों को
अपने स्वागत में खुला पाया।

अंदर कवि की कल्पना
या बेरोजगार के सपनों की तरह
सारा सामान बिखरा पड़ा था,
और मै, हूट हुए कवि की तरह खड़ा था।
क्या-क्या गिनाऊँ सामान
बहुत कुछ-चला गया श्रीमान
बस एक ट्रांजिस्टर में, बची थी थोड़ी-सी ज्योति,
जो घरधरा रहा था,
मेरे देश की धरती सोना उगले, उगले हीरे मोती।
सुबह होते ही लोग आने लगे
चाय पीकर और उपदेश पिलाकर जाने लगे-
मेरे गम में अपना गम, गलत करने करने के लिए
ठूँस-ठूँस कर खाने लगे।
चोरी हुई सो हुई, चीनी पत्ती, दूध पर पड़ने लगा डाका
दो ही घटे में खाली डिब्बों ने मेरा मुँह ताका।
मेरी परेशानी देखकर
मेरे पड़ोसी शर्माजी ने ऐसा पड़ोसी धर्म निभाया।
मुझसे पैसे लिए
और पत्ती, चीनी के साथ समोसे भी ले आय।
अगले दिन मैनें
दरवाजे जितना बड़ा बोर्ड लगवाया
और उसे दरवाजे पर ही लटकाया
जिस पर लिखवाया भाइयों और बहनों,
कल रात जब मैं घर आया, तो मैने पाया
कि मेरे यहाँ चोरी हो गयी
चोर काफी सामान ले गये
मुझे दुःख और आपको खुशी दे गये।
क्यों कि अब मैं जान गया हूँ
कि वही आदमी सुखी है

जिसका पड़ोसी दुःखी है। 163

आज की युवा पीढ़ी में नैतिकता खत्म होती जा रही हैं। आज की युवा पीढ़ी देश प्रेम और शहीदों को नहीं पहचानते है। वे सिर्फ फिल्म स्टारों को पहचानते है। समाज में अपनी संस्कृति और सभ्यता का कोई नाम निशान नहीं है। समाज में सांस्कृतिक मूल्यों के पतन को देखकर कवि अशोक विश्नोई ने व्यंग्य पंक्तियाँ लिखी है -

सड़क के उस पार, फूटपाथ पर
चादर बिछाए, एक आदमी,
काफी देरसे, आवाज लगा रहा था,
एक रुपए में चार, रुपए में चार छँट रहे थे-
रेखा, हेमा, जितेन्द्र
और पास ही खड़े चितांजनक निराश
आजाद, भारत, विस्मिल,
आगुंतुकों को निहार रहे थे
जैसे कह रहे हों-अरे,
हमारा भीतो मोल-भाव कर लो
आठ आने में चार ही धर लो-
तुम्हारा सिर शर्म से झुकने नहीं देंगे
जब-जब हमें निहारोगे, तुम्हें गुम नहीं होने देंगे
भारतीय संस्कृति करें कभी खोने नहीं देंगे। 164

आधुनिक युग का सामाजिक परिवेश इतना बदल गया है। कि यहाँ पर भारतीय संस्कृति ढूंढ़ने पर भी नहीं दिखाई दे रही है। सांस्कृतिक मूल्यों का पतन इतनी तीव्र गति से हो रहा है। किं समाज में कोई भी वस्तु मूल्य स्थिर नहीं रह पा रहे है। इस वास्तविकता पर कवि अरुण जैमिनी ने व्यंग्य किया है-

जिन्हें कभी देख नहीं पाओगे
इक्कीसवी सदी में ढूँढ़ते रह जाओगे।
बच्चों में बचपन
जवानों में यौवन
शीशों में दरपन

जीवन में सावन
गाँव में अखाड़ा
शहर में सिघाड़ा
टेबल की जगह पहाड़ा
और पजामे में नाड़ा
ढूँढ़ते रह जाओगें। 165

समाज में किसी भी क्षेत्र में, भारतीय संस्कृति नहीं दिखायी दे रही है। आज के युग में समाज में पहले जैसे लोग ढूँढ़ना मुश्किल है। पहले का वातावरण शुद्ध था आज अनेंक विषमताओं का प्रवेश हो गया है।

आँखों में पानी, दादी की कहानी,
प्यार के दो पल, नल-नल में जल।
संतो की बानी, कर्ण जैसा दानी
घर में मेहमान, मनुष्यता का सम्मान
पड़ोस की पहचान, रसिकों के कान
ब्रज का फाग, आग में आग,
तराजू पे बट्टा और लड़कियों का दुपट्टा
ढूँढ़ते रह जाओगे।
गाता हुआ गाँव, पनघट की छाँव
किसानों का हल, मेहनत का फल,
मेहमान की आस, छाछ का गिलास,
चहकता हुआ पनघट लंबा सा घूँघट
लज्जा से थरथराते होंठ और पहलवान की लंगोट
ढूँढ़ते रह जाओगे। 166

आज को सामाजिक परिवेश में सांस्कृतिक मूल्यों का पतन तीव्र गति से हो रहा है। आज की पीढ़ी में सांस्कृतिक मूल्य, रीति, रिवाज, ढूँढ़ने पर भी नहीं मिलती है। इस संदर्भ में जैमिनी हरियाणवी ने व्यंग्य किया है -

आज का इन्सान
भीतर से कटपीस, ऊपर से थान,
आज की नारी

विवाह से पूर्व तलाक की तैयारी,
आज का पहलवान
फिल्मी स्टूडियों में पूछों को तान। 167

आधुनिक युग में सामाजिक जीवन में अनेक विषमताओं का समावेश हो गया है। आज मनुष्य के जीवन में सिर्फ अर्थ की महत्ता ही रह गयी है। मनुष्य में आपसी प्रेम, व्यवहार, आत्मीयता, सम्बन्धी का कोई महत्व नहीं रह गया है। आज के आधुनिक युग में पति-पत्नी जैसे आपसी सम्बन्धों को भी हिला दिया है। अपनी भारतीय संस्कृति और सभ्यता को भूल बैठे है सांस्कृतिक मूल्यों के पतन को देखकर कवियत्री सरला भटनागर ने व्यंग्य की अभिव्यक्ति की है -

कैसा था यह देश हुआ अब कैसा।
मूल मन्त्र बन गया यहाँ अब पैसा॥
रे पैसा....
दिन दहाड़े लुटते देखें बैंक और दुकानें,
भरी बाजारों डाका पड़ता, कौन किसी को जाने।
मिनटों में पिस्तौल, दिखाकर नामा है घरवाते,
चलते-चलते माँ बहिनो, की जंजीरे खिचवाते।
कौन खड़ा हो किसके आगे इज्जत कौन बचाए
जब इज्जत के रखवालों को ही नींद जोर की आए,
सुनते आए थे सदियों से होगा कलयुग ऐसा
गला दबा के छीने झपटें लूटें पैसा पैसा रे पैसा॥ 168

अल्हड़ बीकानेरी ने समाज में भारतीय संस्कृति को लुप्त होते देखकर व्यंग्य किया है। आज भारतीय अपनी संस्कृति के अनुरूप कार्य करना भूलकर पाश्चात्य संस्कृति का अनुसरण कर रहे है-

गारा की कीमत गिरी, मारा फिरता सांड,
कुत्ते की बढ़ने लगी, चारों तरफ 'डिमांड'.
चारों तरफ 'डिमांड', अजब ईश्वर की माया
नारी युग के साथ-साथ कुत्ता-युग आया
कहँ 'अल्हड़' कवि, पेट आदमी का है रीता।
लेकिन कुत्ता ब्रेकफास्ट में कॉफी पीता। 169

स्वतंत्रता के पश्चात देश में अनेंक विकृतियों का समावेश हो गया है। गरीबों के स्थान हटाये गये। चारो तरफ नये वस्तुओं का विस्थापन हुआ। हिन्दी पढ़ने में लोग नीचा समझने लगें और इंग्लिश को सर्वोच्च स्थान दिया और भारत की संस्कृत लुप्त हो गयी विदेशी संस्कृति का अनुसरण हो गया। परिवार समाज में आपसी, प्रेम सम्बन्ध विघटित हो गये है। समाज के सांस्कृतिक मूल्यों के पतन पर आचार्य भगवत दुबे ने व्यंग्य किया है -

बदनियत, मक्कारियों के सिलसिले बढ़ने लगे
कैसी आजादी मिली, शिकवे-गिले बढ़ने लगे
बस्तियाँ गंदी, गरीबी, यूं हटाई देश से
हर तरफ विस्थापितों के काफिले बढ़ने लगे
राजनैतिक खेल, सत्ता के लिए खेलें गए
देश में अपराधियों के दृढ़ किले बढ़ने लगे
हो रही हिन्दी उपेक्षित, रौब इंग्लिश का जमा
दिन-ब-दिन कान्वेन्टों में, दाखिले बढ़ने लगे
खान गहरी, बांध ऊंचे, और वन बौने किए
पांव पर मारी कुल्हड़ी, जब जले बढ़ने लगे
सूत्र बिखरे एकता के, देश टुकड़ों में बटां
मानसिक संकीर्णताओं के जिले बढ़ने लगे
यूं तो मंगल, चांद, सूरज से बढ़ी नजदीकियां
आदमी से आदमी के फासले बढ़ने लगे। 170

भारतीय समाज में अनेक विषमताओं का समावेश हो गया है। समाज में व्यक्ति भारतीय संस्कृति को अपनाने में अपनी तौहीन समझ रहे है। और पास्चात्य संस्कृति पर चलकर गर्व का अनुभव कर रह है। ऐसा प्रतीत हो रहा है कि आगे समय में भारतीय संस्कृति पूर्णतः लुप्त हो जायेगी। इस वास्तविकता पर कवि अवधेश अवस्थी ने व्यंग्य पंक्तियाँ प्रस्तुत की है -

मेरी माँ
बांये हाथ से आंचल को थाम
दाहिने हाथ से तीन बार
बड़ों के चरण छूकर करती थी प्रणाम

परम्पराओं में मगर
परिवर्तन आ रहा है
चरणों के स्थान पर सिर्फ घुटना
छुआ जा रहा है
देखते रहिये, समय अभी और भी
बदलाव लाएगा
चरण स्पर्श की जगह
चरणों से स्पर्श शुरु हो जाएगा
मेरी माँ
नियमित जागती थी सुबह सवेरे
स्नान-ध्यान कर, रती थी सूर्य प्रणाम
परम्पराओं में जीती थी
उसके बाद ही जल पीती थी
परम्पराओं में मगर
परिवर्तन आ रहा है
मनुष्य स्वयं संस्कारों को तोड़ रहा है
बेड-टी पीने के बाद
बिस्तर छोड़ रहा है। 171

आज समाज में भारतीय संस्कृति पूर्णतः लुप्त हो गयी है। आज नयें युग की पीढ़ी के बच्चे अपनी संस्कृति भूल चुके है भारत की स्वतन्त्रता के लिए जो शहीद हुए थे उनको न पहचान कर फिल्म स्टारों को पहचानते है। आज के बदलते हुए सास्कृतिक परिवेश को देखकर श्रीमती अभिनेश शर्मा ने व्यंग्य लिखा है -

एक और स्वतन्त्रता दिवस आयेगा
और चला जायेगा, कहीं प्रभात फेरी की हलचल
किसी स्कूल में बच्चों की हलचल
तिरंगे को फहराना, राष्ट्रगान गाना
दो चार शब्द आजादी के दोहराना
और वापस अपनी दिनचार्य में
मगन होकर, फिर वही सब दोहराना।

ज्यादा हुआ तो दूरदर्शन की सेवायें
लेकर लहराते हुए तिरंगे को निहारना
एक या दो राष्ट्रगीत के गीतों को गुनगुनाना
बस यही सब है।
आज
स्वतंत्रता दिवस दिन तारीख इतिहास गवाह है
हर वर्ष होने वाला एक निवाह है।
अब तो आजादी के वीरों के
नाम भी याद नहीं नौनिहालों को
गांधी, नेहरू, सुभाष से ज्यादा सुहानी याद नहीं।
नैनिहालों से भगतसिंह का नाम लो वो कहेगे,
कौन सा भगतसिंह, अजय देवगन या बॉबी देओल।
कहाँ रह गया जोश, आज की पीढ़ी में
कि स्वतंत्रता दिवस को मनाना है, आज तो सिर्फ स्वतंत्रता
दिवस का नाम दोहरना है। 172

सामाजिक रुढ़ियाँ :-

भारतीय समाज में रीति-रिवाजों का निर्माण तत्कालीन समाज की आवश्यकताओं के अनुसार किया जाता था। परिस्थितियों के परिवर्तन के साथ-साथ उसकी उपयोगिता नगण्य हो जाती है। हम फिर भी उसी रास्ते पर चलते रहते है। पहले के पुराने समय में समाज में ये रूढ़िया स्वस्थ परम्परा के रूप में नवजीवन देने वाली थी। परन्तु आज की बदलती हुई परिस्थितियों में इन रुढ़ियों का विकराल रूप बढ़ गया है। जो हमारे जीवन में अवरोध पैदा करती है।

दहेज प्रथा :-

आधुनिक युग में दहेज प्रथा समाज के लिये कलंक है। समाज के लिये एक अभिशाप बनकर रह गयी है। आज बढ़ती हुई महँगाई में एक पिता कमा-कमाकर जीवन निर्वाह मुश्किल से कर पाता है। जब उसकी बेटी बड़ी होती है। तो उसे उसकी विवाह की अधिक चिन्ता होती है क्योंकि दहेज के विकरला रूप को पूरा करने के लिए उसके पास क्षमता नहीं होती है -

पैसे से सबकुछ मिल,ा नहीं मिला ठहराव,

कमा-कमा कर थक गये, फिर भी रहा अभाव।
पुत्री हुई जवान अब, कैसे करें विवाह?
नहीं पिता से हो रहा, घर का ही निर्वाह। 173

दहेज प्रथा दिन पर दिन बढ़ती जा रही है। आधुनिक युग में विवाह दहेज के उपर निर्भर है। पहले के विवाह में दहेज स्वेच्छा से दिया जाता था, परन्तु आज दहेज ने अनिवार्यता का रूप ले लिया है। इसकी पूर्ति न होने पर बहू को जला दिया जाता है उन्हें याचनाएँ दी जाती है। आज दहेज प्रथा एक रुढ़ि बन गयी है यही हाल रहा तो माता-पिता पुत्री की शादी करना मुश्किल हो जायेगा। इस वास्तविकता पर कवि धमचक मुलथानवी ने व्यंग्य लिखा है -

दहेज के लिये
कई रिश्ते रिजेक्ट किये
क्योंकि आज का विवाह दहेज के धंधो पर टिका है
दहेज के लालच में आदमी जानवरों की तरह बिका है।
पहले बात हजारों में होती थी
अब लाखों में चल रही है
यही वजह है कि आज इतनी बहु-बेटियाँ
स्टोव्ह से जल रही हैं
यही हाल रहा
शादी से पूर्व दहेज का सवाल रहा
एक दिन ऐसा आएगा,
पुत्री के पैदा होने का समाचार सुनकर
बेचारा पिता मर जाएगा। 174

दहेज सुरसा के मुँह की भाँति बढ़ती जा रही है। बिना दहेज के बेटी का विवाह करना मुश्किल है। आज की महँगाई में व्यक्ति को जीवन निर्वाह करना मुश्किल हो गया है। और दहेजकी अनिवार्यता भी बढ़ती जा रही है। विवाह एक व्यापार बन गया है, इश संदर्भ में अशोक अंजुम ने व्यंग्य की अभिव्यक्ति की है-

ऊधौ, बिटिया ठाड़ी द्वारे।
बिन दहेज कैसे व्याहूँ, दीखत चंदा तारे॥
खबर सुनी स्टोव फीट रहे, जी मै चुभत कटारे।

रोटी-दाल की जुगत न होवे, महँगाई के मारे॥
ऐसे में टी.वी. स्कूटर, मांगत नन्द दुलारे।
खोजत-खोजत वर की अंजुम जूता फटे हमारे।
खुद की सूरत आड़ी-तिरछी ता पै थब्बा कारे।
लेकिन सुघड़-सुन्दरी, दुलहिन कहते हमकों लारे। 175

भारतीय समाज में विवाह एक संस्कार के रूप में था। परन्तु दहेज ने इसे अलग रूप दे दिया है। इस संस्कार का कोई महत्व नहीं रहा है। आज दहेज के लोभी बहु-बेटियों को ससुराल में अनेक प्रताड़नाये देते है। और उन्हें अनेक कठिनाइयों का सामना करना पड़ रहा है। इस संदर्भ में अनिल प्रियदंशी ने व्यंग्य किया है -

यह मेरी डायरी का आखिरी पन्ना है
जिन्दगी के आखिरी मोड़ पर बस इतना कहना है
कहना है कि फिर वही
गर्म-गर्म चिमटो के दाग
और उँगलियों के पौरों में सुइयों का सिलसिला
ससुराल में मुझे और क्या मिला
चिमटो और सुइयों से कही पैना शब्द है 'दहेज'
जिसने मुझे काटा है, आरी की तरह
और कहा है बस सहती रह, सहती रह,
और मेरी डायरी तू तो जानती है यह राज।
कि मैं रहूँगी सिर्फ आज
कल फिर एक बार मेरी डोंली निकलेगी
लोग राम के नाम को सत्य कहेगे
और समझ नहीं पाएँगे
कितने असत्यों ने मुझे मारा है
जीवन मुसीबतों से हारा है। 176

भारतीय समाज में विवाह एक व्यवसाय बन गया है। एक गरीब को अपनी बेटी का विवाह करना मुश्किल हो गया है। दहेज की लालच में व्यक्ति भारतीय संस्कृति भूलकर, लालची, झूठ,फेरबी बन गये है। जिससे भ्रष्टाचार समाज में विकराल रूप में बढ़ गया है। इस विषय पर संजय मल्होत्रा ने व्यंग्य लिखा है-

तो क्या डरेगा खाक ये शर्मशीर देखकर
लौटा है अभी यार जो कश्मीर देखकर।
कैसे किसी गरीबकी बेटी बने दुल्हन,
रिश्ते तलाश होते है, जागीर देखकर।
तफ्तीश की या जांच की फुरसत उन्हें कहाँ,
सब खबरें लिख रहे फक्त तहगीर देखकर
तदबीर सोचता हूँ मिलूँ तुमसे किस तरह,
हाथों में लिए मैं मेरी तस्वीर देखकर।
मै क्या हूँ, हमनवाज मुझे हो गया पता,
अपनी गरीब मुल्क की, तकदीर देखकर। 177

भारतीय समाज में अनेंक विकृतियों का समावेश हो गया है। जिसमें एक दहेज प्रथा भी है। दहेज ने एक ऐसा रूप ले लिया है कि गरीब की बेटी की शादी में दहेज पूर्ति न होने पर बारात वापस ले जाते है। इस विषय पर कवि नरेन्द्र मिश्र धड़कन ने व्यंग्य किया है।

खाना परोसकर
परात चली गई
पांसा को छोड़कर विसात चली गई।
गरीब की पगड़ी उछालकर
मंडप से उठकर
बारात चली गई। 178

आज के बदलते हुए परिवेश में अनेंक समस्यायें बढ़ती जा रही है। आधुनिक युग में दहेज प्रथा ने एक विकराल रुप ले लिया है। जिससे भ्रष्टाचार भी बढ़ता जा रहा है। इस पर रोक लगाना आवश्यक है। समाज में जो दहेज विरोधी है परन्तु स्वयं उन्हें दहेज लेना अच्छा लगता है इस सम्बन्ध में कवि जय कुमार रुसवा ने व्यंग्य लिखा है -

दहेज विरोधी
कमेटी के
अध्यक्ष की
यह विचारधारा

हैरत अंग्रेज है
कि उनको
दहेज
लेने से नहीं
देने से
परहेज है। 179

आज की बदलती हुई परिस्थितियों में मनुष्य का ध्येय सिर्फ पैसा बटोरना है। चाहे वह किसी भी तरह से ले। आज विवाह को ही व्यक्ति ने व्यवसाय बना लिया है। एक गरीब की बेटी का दुल हन बनना सपना रह गया है। आज दहेज के भूखे इन्सान पर कवि काशीपुरी कुंदन ने व्यंग्य किया है-

वह निरीह है, लाचार है
दहेज के बाजार में दामाद का खरीदकर है।
ऊँची-ऊँची बोलियों के वर से नारकीय यंत्रणा भोग रहा है।
क्योंकि उसकी बेटी के किस्मत में-
कोई वर नहीं वियोग रहा है।
उसके लिए समूचा जीवन महज इसलिए अभिशाप है
कि वह जवान बेटी का बाप है।
वैसे तो समाज के भूखे जवान भेड़िए
हमेशा उसकी जवान बेटी का हाथ मांगते हैं
मगर दहेज का सवाल खड़ा होते ही दुम दबाकर भागते हैं।
उसका सिर्फ एक ही सपना है,
किस तरह बेटी का हाथ पीला हो जाए
भले ही भविष्य के सारे अरमान आँशुओं से गीले हो जाए।
मगर उसके दरवाजे पर जो भी युवक आता है
घर की चिर सुहागिन गरीबी को देखकर
उसकी बेटी को कुंवारी ही छोड़ जाता है।
हालत ने उसे ऐसे झंझावतों में पाला है। 180

भारतीय समाज में दहेज एक प्रचलन के रूप में था। परन्तु आज तो इसे अतिआवश्यक बना दिया है, दहेज के बिना विवाह का होना मुश्किल है। दहेज के

कारण कभी-कभी बारात को बिना दुल्हन के वापस लौटना पड़ता है। कितनी ही अनुभव-विनय की जाए, उन पर कोई प्रभाव नहीं होता वे बारात तक वापस ले जाते है। ऐसी घटनायें समाज में आये दिन होती रहती है। इस संदर्भ में काका हाथरसी ने व्यंग्य किया है -

बंटावारे ने कही, यही हमारी टेक,
दरबज्जे पै लै लऊँ, नगद, पाँच सौ एक।
नगद पाँच सौ एक, परेंगी तब ही भाँवर,
दूल्हा करि दौ बंद, दई भीतर सौ साँकर,
बेटीवारे ने बहुत जोरे उनके हाथ,
पर बेटा के बाप ने सुनी न कोऊ बात।
बिना बहु के गाम को आई लौट बरात। 181

आधुनिक युग में दहेज ने रूढ़िका रूप ले लिया है। आज के मनुष्य ने दहेज आवश्यक बना दिया है। दहेज के बिना विवाह नहीं हो सकते है। लेन-देन में फूट पड़ने पर शादी बीच में ही रुकवा दी जाती है। और पैसों की खातिर रंग में भंग फैल जाता है। इस विषय पर काका हाथरसी ने व्यंग्य किया है -

भीतर-भीतर स्वार्थ है, ऊपर से परहेज,
लड़की सुन्दर चाहिए, लेंगे नहीं दहेज।
लेंगे नहीं दहेज, इशारा कर दो इतना,
लगा रहे हो शादी में कुल पैसा कितना?
हाथ जोड़कर बोला, उनसे बेटी वाला,
आज्ञा दोंगे उतना, लग जाएगा लाला।
लेन-देन के फेर में, बढ़ी आपसी फूट,
फेरा पड़ने के समय, गयी दुल्हनिया रूठ,
गयी दुल्हनिया रुठ, कुंआरी बनी रहूँगी,
दहेज के लोभी से शादी, नहीं करूँगी।
भिड़-गए समधी-समधी दंगम दंग हो गया
लौट गयी बारात रंग में भंग हो गया। 182

समाज में पहले के लोग रीति-रिवाजों को मानते थे। विवाह प्रथा एक पवित्र बंधन के रूप में माना जाता था माता-पिता कन्या का विवाह खुशी के साथ करते थे।

आज यह प्रथा दहेज बढ़ने पर बोझ बन गयी है। समाज की बढ़ती हुई कठिनाइयाँ दहेज रूपी दानव के कारण अधिक बढ़ गयी है। इस प्रकार काका ने व्यंग्य लिखा है-

कन्या संग कुमार का, ब्याह इसलिए होय,
दोनों खूटे से बँधे, भाग सके नहिं कोय।
भाग सके नहीं कोय, कुछ दिनों मौज मनायें,
होय बखेड़ा खड़ा, अधिक बच्चे बन जायें।
लड़की हुई जवान, नहीं लड़का मिल पाता,
दहेज-दानव, लाल-लाल आंखे चमकाता।
तब कहता भगवान, मुझे कुल दो या मत दो।
व्याह कैंसिल करके, हमें कुंवारा कर दो। 183

आज के समाज में दहेज रुपी रुढ़ि ने इतना बड़ा रुप ले लिया है कि इसके कारण समाज में अनेंक विकृतियाँ फैलती जा रही है। आज केयुग में माता-पिता अपनी शक्ति से भी ज्यादा दहेज देते है। फिर भी उनकी ससुराल में सुखी नहीं रहती है- इस विषय पर काका हाथरसी ने व्यंग्य किया है-

बहुत पुराना चल रहा, यह दहेज दस्तूर,
बेटी वाला क्या करे उसका नहीं कसूर।
उसका नहीं कसूर कहे वह दुःखड़ा किससे,
जितनी उसकी शक्ति दे रहा दुगुना उससे।
फिर भी सास ननदियाँ टेढ़ी आंखे करती। 184

दहेज लेने के लिए व्यक्ति की लालसा बढ़ती जा रही है दहेज लेना देना दोनों अपराध है परन्तु दहेज लोभी इसे चुप के से ले रहे है इस पर काका ने व्यंग्य पंक्तियाँ लिखी है-

जिसके मन मस्तिष्क पर, धन का चढ़ा जुनून,
उनेक आगे क्या करें, यह दहेज कानून।
यह दहेज कानून, प्रत्यक्ष लेने से डरते,
परदे के पीछे चुपके से नोट सरकते।
जब तक काले धन का, सांप न मर जायेगा।
तब तक यह कानून, कुछ नहीं कर पायेगा। 185

समाज में दहेज सुरसा के मुँह की भाँति फैलता जा रहा है। दहेज एक

अनिवार्य रूप लेता जा रहा है। और गरीब माँ-बाप बेटी की शादी करने के लिए रो रहे है। यदि वे लड़के वालें को मुँह मागा देते है। तो पूरा घर खाली हो जाता है। इस समस्या पर काका हाथरसी ने व्यंग्य किया है-

कन्या अश्रु बहा रही, परेशान माँ-बाप,
काले नोट दहेज में, सरक रहे चुपचाप।
सरक रहे चुपचाप, उदासी मुँह पर छाई,
दिन-दूनी बढ़ रही, लड़कियों की लम्बाई।
बेटे बालों का लालच हो कैसे पूरा,
'मुँह मागा' दे दे तो घर हो जाए घूरा। 186

आधुनिक युग में दहेज को बढ़ावा देनेवाले शासक नेता है। ये अपने पुत्र-पुत्रीयों की शादी में अत्याधिक धन व्यय करते है। जिसे देखकर समाज के आम व्यक्तियों को यहीं बढ़ावा मिलता है और यह दहेज़ रूपी दानव दिन पर दिन बढ़ता जा रहा है इस विषय पर काकाहाथरसी ने व्यंग्य किया है -

मंत्री जी के पुत्र की, शादी पर सब मौन,
कुल कितना धन व्यय हुआ, खोल सके मुँह कौन।
खोल सके मुँह कौन धन्य है अपना नेशन,
तीन लाख का व्याह, चारके पैजेन्टेशन।
छम-छम करती, लाज-लजीली दुलहिन आई
स्वर्णहार दे दिया, भेंट में मुँह दिखलाई। 187

आज समाज में दहेज ने एक विकराल रूप ले लिया है। दहेज लेना और देना दोनों अनिवार्य बन गये है। इसके बिना विवाह होना नामुनकिन हो गया है इन बदलती हुई परिस्थितियों पर काका हाथरसी ने व्यंग्य किया है

बेटी जाए सासरे, देना पड़े दहेज,
बेटे की आए बहू, लाए साथ लगेज। 188

आज के युग में दहेज की लालसा इतनी बढ़ गयी है। कि इन्सान को इससे तृप्ति नहीं होती है। इस प्रकार के दामादो पर काका हाथरसी ने व्यंग्य किया है। कि उन्हें जीवन भर पैसा लेने की लाससा बनी रहती है।

जीवन भर देते रहो, तृप्त न हो ये शक्स,
तो फिर यह दामाद है, अथवा लैटर बक्स,

अथवा लैटर-बक्स, मुसीबत गले लगा ली,
नित्य डालिए, किंतु दिखे खाली ही खाली।
कितना भी दे दो, फिर भी टपकाते आँसू,
ऐसे दामादों से मुँह ढक लेती सासू। 189

समाज में दहेज रूपी दानव अत्यधिक विकराल रूप में बढ़ता जा रहा है। दहेज के लालच में लोग अपना धर्म, ईमान खो देते है। आज मनुष्य सिर्फ धन की तरफ भाग रहाहै चाहे वह किसी भी तरह से प्राप्त हो। काका हाथरसी के विचारानुसार इस अपराध को बढ़ावा देने वाले लोगों को सजा मिलनी चाहिए -

लाखों माँगे आपसे, जब बेटे का बाप,
उसकी इस आवाज को, टेप करो चुपचाप।
टेप करो चुपचाप, पुलिस में जमा करा दो,
अता-पता उस दहेज, लोभी का बतला दो।
खुल जाए जिस समय, जेल फाटक का ताला,
पूछो कितना दहेज , लेकर छूटे लाला। 190

आज समाज में दहेज लेना और देना दोनों कानूनी अपराध माना गया है। परन्तु आजकल, नंबर दो का धंधा करने वाले कालाबाजारी करने वाले अत्यधिक धन कमाकर शादी, में लगाते है। जिससे दहेज को बढ़ावा मिल रहाहै। इसके विरोध में बनाया गया कानून बेकार हो गया है। इस संदर्भ में काका हाथरसी ने व्यंग्य किया है -

नंबर दो का धन भरा, तो फिर क्या परहेज,
सेठ लोग दिल खोलकर, दें भरपेंट दहेज।
दे भरपेट दहेज, किसे दामाद बनाएँ,
डाक्टर, इंजीनियर, लखपती लड़का पाएँ.
चुपके-चुपके नोट सरकते इनके द्वारा,
रोता रहता है दहेज कानून विचारा। 191

समाज में विवाह एक संस्कार का रूप माना जाता था। परन्तु आज इसका रूप बदल गया है। इसे धन कमाने का व्यवसाय बना दिया है। शादी के बाद लड़कियों को दहेज लाने के लिए मजबूर किया जाता है इस सम्बन्ध में काका हाथरसीने व्यंग्य किया है -

एक बाप की लाड़ली, लड़की अश्रु बहाय,
टप-टप आंसू गिराए, कारण कुछ न बताये।
कारण कुछ न बताय, प्यार से पूछा हमने,
क्या कारण बिटिया, दुःख पाया क्या तुमने।
मेरे पापा पर नहिं, बिल्कुल पैसा काला,
एक लाख माँगे दहेज में, बेटे वाला।
ऐसे लोभी से मैं शादी नहीं रचाऊँ।
जीवन भर क्वारी रह करके ही मर जाऊँ। 192

आज के युग में समाज में महँगाई इतनी बढ़ती जा रही है। कि व्यक्ति को अपना जीवन निर्वाह करना मुश्किल हो गया है और ऐसे में गरीब को बेटी की शादी करना मुश्किल है। दहेज के लोभी हमेशा मुँह फैलाए रहते है समाजकी इन विपरीत परिस्थितियों पर काका हाथरसी ने व्यंग्य किया है -

शादी से यह फायदा, होय एक के दोय,
क्या होता नुकसान फिर, जानत है सब कोय,
जानत है सब कोय, अधिक बच्चे हो जाएं,
महँगाई में सुख के, सब अरमां खो जाएं।
लली सयानी होय, ढूँढ़ने जाओ दूल्हा,
दहेज लोभी दानव, मटकाते है कूल्हा।
उनके घर में चाहे, टूटी खटिया होई,
डेढ़ लाख से कम में, बात न करता कोई। 193

फिल्मी व्यंग्य : भारत में फिल्मों की बढ़ती हुई लोकप्रियता ने जन-जन को प्रभावित किया है। शायद ही ऐसा कोई व्यक्ति हो, जिसें फिल्में देखना ना पसन्द हो या फिल्मों में जानकारी न रखता हो। मनोरंजन के साधनों में आज सबसे लोकप्रिय साधन फिल्म ही है। और आज फिल्मों में अनेक विसंगतियों का समावेश है। जिसका प्रभाव समाज पर पड़ता है। आज की युवा पीढ़ी फिल्मों की तरफ अधिक आकर्षित होती जा रही है। फिल्मों का ही अपने जीवन में अनुसरण करने लगी है। समाज की बदलती परिस्थितियों पर काका हाथरसी ने व्यंग्य किया है -

हीरोइन के सामने मटक-मटक बलखाय,
इसी कला से हास्य का हिट हीरो बन जाय। 194

आज की युवा पीढ़ी फिल्मों की तरफ अधिक आकर्षित होती जा रही है। फिल्मों में हीरो-हीरोइन के रहन-सहन सभ्यता को अपने जीवन में उतारते है। युवा पीढ़ी के लिये मन्दिर, मस्जिद सिर्फ सिनेमाघर है। इस बदलते हुए सामाजिक परिवर्तन पर काका हाथरसी ने व्यंग्य किया है।

फिल्मी हीरो-हीरोइनो, पर जनता आशक्त,
मंदिर-मस्जिद से अधिक, बने सिनेमा-भक्त।
बने सिनमो-भक्त भजन-कीर्तन नहिं भाएँ,
मुक्त मिले परसाद, उसी मंदिर में जाएँ।
फिल्मी हाउस फुल, हो रही मारा-मारी,
मंदिर सूना, केवल ठाकुर और पुजारी। 195

आज की फिल्मों से युवा पीढ़ी अधिक आकर्षित है। फिल्म-जगत के कलाकारों का अभिनय करते देखकर उसी प्रकार अपना जीवन बना लेते है और आज की युवा पीढ़ी का जीवन पाश्चात्य संस्कृति की तरफ आकर्षित होता जा रहा है। इस संदर्भ में काका हाथरसी ने व्यंग्य किया है -

विरही-विरहिन फिल्म, में मिल करके जब रोय
मोती मालुम होय, रूदन का आर्ट दिखाएँ,
ऐसे जाली घड़ियाली, आँसू कहलाएँ.
किसी फिल्म में रोती जब हीरोइन रानी,
वक्षस्थल पर टपके ग्लैसरीन का पानी। 196

आधुनिक युग में फिल्में मनुष्य जीवन का अभिनव अंग बन गयी है। आज की फैशन उच्च श्रेणी की हो गयी है। इस फैशन के दौर में ज्यादा उम्र के व्यक्ति कम उम्र के दिखते है। इस संदर्भ में काका हाथरसी ने व्यंग्य किया है -

कोई ज्यादा कोई कम अपनी उम्र बतायें,
गंजे सिर पर विग लगा, नकली दाँत-दिखायें।
नकली दाँत दिखायँ, हुए बाबा सन्यासी,
पैसठ के हैं लेकिन, बहतलाएँ पिचासी।
फिल्म तारिका घिसतेघिसते हो गई बुढ़िया,
मेकप करके दीखे छैल-छबीली गुड़िया। 197

6. पारिवारिक सम्बन्धों में विघटन :

समाज के बदलते हुए परिवेश में पुराने सम्बन्धों और मूल्यों को अत्यधिक क्षीण कर दिया है- आज समाज में त्याग, सेवा, सहिष्णुता, धर्म तथा कर्तव्यपरायणता आदि मूल्यों को अर्थ प्रधान संस्कृति ने छिन्न-भिन्न कर दिया है। भारतीय समाज में आर्थिक विषमता के कारण विचारों की उलझन तथा नये परिवर्तनों के कारण पति-पत्नी में भी अनेंक उलझनें पैदा हो जाती इस संदर्भ में अल्हड़ बीकानेरी ने व्यंग्य किया है-

बदले बीस मकाम, घूम
कर दितली-भर में
डाला अंतिम डेरा जाकर
प्रेम नगर में
पत्नी बोली, भाड़ में, जाए अभी मकान
करती हूँ मै तो अभी मैके को प्रस्थान
मैके को प्रस्थान उठो, घर-बार सम्भालो
बच्चों की यह टीम, ठाठ
से पौसो-पालो। 198

आधुनिक युग में पति और पत्नी के समान-अधिकार दिये जाते है। आज की महलायें किसी से कम नहीं समझती है। आधुनिक युग में महलायें बंधन में नहीं रहना चाहती है। आधुनिक विचार की पत्नी तर्क करने में निपुण होती है। सद्व्यवहार सम्मान करना भूल गयीहै। इस संबंध में काका हाथरसी ने व्यंग्य द्वारा लिखा है -

आधुनिक पत्नी मिली, करे नित्य तकरार,
तर्कशास्त्र की पंडिता, कभी न मारे हार।
कभी न माने हार, शत बतला दे दिन को,
तुम पूरब को कहो, जाएगी वह पश्चिम को,
चड़ी माई बनकर, उल्टी गंग बहाती,
ऐसी नारी सर्वगुणी संपन्न कहाती। 199

आधुनिक युग में परिवारों में सम्बन्धों में विघटन इसलिये हो रहा है। कि परिवार का प्रत्येक सदस्य स्वार्थी हो गया है। सिर्फ अपने स्वार्थ तक ही सीमित है। परिवार में बहुओं पर रौब जमाना अपना अधिकार जताने पर पारिवारिक विघटन होना

स्वभाविक है। महिलाओं की इन विपरीत विचाराधारओं पर काकाहाथरसी ने व्यंग्य किया है -

चली जाइए आप भी ज्योतिषियों के पास,
दिखा लीजिए कुण्डली, उल्टी निकले सास।
उटली निकले सास, ठाठ से रौव जमाकर,
तोड़ रहीहै खाट, बहु को समझ चाकर।
वही बहू बूढ़ी होकर, जब राज सम्हाले,
सास-छाप कीटाणु उसमें घुस जायँ सारें। 200

आज के परिवारों में स्नेह-सूत्री की धज्जियाँ उड़ गयी है। परिवार का ढ़ाँचा चरमरा कर टूट रहा है। परिवार में महलाओं की विचार-धारायें अलग-अलग है। साँस बहू को दूसरे के घर की लड़की समझकर गलत व्यवहार रखती है। यदि समझदार बनकर लड़की, बहू को समानता से रखें। तो परिवार में दरारें नहीं पड़ सकती है इस विषय पर काका हाथरसी ने व्यंग्य पंक्तियाँ लिखी है-

बेटे की शादी हुई, आई बहू सुशील,
सासूजी हर बात में, देती रहे दलील।
देती रहें दलील, गालियाँ गंदी देती,
पक्ष सर्वदा अपनी, ही बेटी का लेती।
समझदार माँ-बाप, गृहस्थी धर्म जानते,
बहू और बेटी को एक समान मानते। 201

2. सांस्कृतिक पारिवारिक मूल्य पतन :

भारतीय समाज में परिवारों में संस्कृति, सभ्यता, रहन-सहन, आचार-विचार ऊँचे स्तर का था। आधुनिक युग में भारतीय संस्कृति पाश्चात्य संस्कृति में परिवर्तित हो गई है। समाज में परिवारों में भारतीय संस्कृति के अन्तर्गत रहन-सहन था। परन्तु आज वो पाश्चात्य संस्कृति को श्रेष्ठ माना जाता है। आज परिवारों में बदलते हुए परिवेश पर काका हाथरसी ने व्यंग्य किया है -

चले गये अँगरेज पर, छोड़ गए निज छाप।
भारतीय संस्कृति, यहाँ सिंसक रही चुपचाप।
सिसक रही चुपचाप, बीबियाँ घूम रही है,
पैंट पहनकर मालरोड पर झूम रही हैं।

कहँ काका जब देखोगें लल्लू के दादा,
धोखे में पड़ जाओगे, नर है या मादा। 202

आधुनिक युग में परिवारों पर पश्चिम का प्रभाव तीव्र गति से पड़ रहा है। आज की पत्नी पाश्चात्य फैशन की तरफ आकर्षित होकर उसी की नकल करने लगी है। यह सब सिनेमा से अधिक प्रभावित होने के कारण हुआ है। भारतीय समाज में परिवारों में पाश्चात्य संस्कृति के रूप देखने को मिलते है -इस विषय पर काका हाथरसी ने व्यंग्य द्वारा अभिव्यक्ति की है -

बीबी जी पर हो गया, फैशन भूत सवार,
संडे को साड़ी बँधी, मंडे को सलवार।
मंडे को सलवार, बाँबकट बाल देखिए,
देशी घोड़ी, चलती, इंगलिश चाल देखिए।
कहँ 'काका' फिर साहब ही क्यों रहे अछूते,
आठ कोट, दस पैंट, अठारह जोड़ी जूते। 203

काका हाथरसी ने भारतीय समाज में परिवारों में आपसी सम्बन्ध मूल्यों को गिरते देखकर व्यंग्य किया है। कि समाज में भारतीय संस्कृति पूर्णतः लुप्त हो गयीहै। पहले समय में परिवारों में बड़े-बुजुर्गो को मान-सम्मान दिया जाता है। परिवार के छोटे लोग बड़ो से पूछकर हर कार्य किया करते थे। बड़ों की आज्ञा का पालन करते थे। परन्तु आज की संस्कृति बदल चुकी है। आधुनिक पीढ़ी बड़ों का सम्मान करना भूल गयी है। और पाश्चात्य संस्कृति में रंगी हुई है-

अस्पताल में प्रसूता, बच्चा जनने जाय,
जन्म होय जब पुत्र का, गीत खुशी के गाय।
गीत खुशी के गाय, शिशू को दूध पिलाए,
चूम-चूमकर प्रिय बेटे, को गोद खिलाए।
धन्य होय माँ, जब-जब प्रिय मुन्ना मुसकाता,
दुखी होय जब ज्वान होकर आँख दिखाता।
दादा बनकर उसने की घर की बरबादी,
अम्मा बनकर हँसी, रो रही बनकर दादी। 204

काका हाथरसी नें आधुनिक युग के परिवारों में पाश्चात्य संस्कृति को देखकर व्यंग्य किया है। पुरानी प्रथा के अनुसार परिवारों में पत्नी घर के सभी कार्य करती थी।

परन्तु आज पति को घरके काम करने पड़ रहे है। भारतीय संस्कृति का समाज में कोई मूल्य नहीं रह गया है -

बहुत पुरानी प्रथा है, इस पर दीजे ध्यान,
ग्रहिणी रोटी बनाए, मर्द जाय दुकान।
मर्द जाय दुकान, समय ने पलटा खाया,
नई रोशनी हुई, दृश्य उलटा ही पाया।
बीबी दफ्तर जाय, छोड़ बाबू की दास्ता,
बाबू उनको बना रहे है चाय-नास्ता। 205

काका हाथरसी ने आज के परिवारों में नारी के चरित्र की उपेक्षा की है। कि पहले की नारी अबला समझी जाने वाली आज परिवार में पूरा अपना अधिकार बनाये हुए है।

औरत अपने हाथ से, बना गए भगवान,
मर्दो को कॉंट्रेक्ट पर, बनवाते श्रीमान।
बनवाते श्रीमान, जिन्हें कहते थे अबला,
बजा रही अब वे मर्दो के सिर पे तबला,
लल्ली के जादू से, वश में हो गए लल्लू,
नारी लक्ष्मीरूप, मर्द को समझें उल्लू। 206

भारतीय समाज में परिवारों में भारतीय संस्कृति लुप्त हो गयी है। पहले के समय में पत्नी अपने पति को परमेश्वर के रूप में मानती थी। कितनी भी आपदाये आयें। वह अपने पति को नहीं छोड़ती थी। परन्तु आधुनिक पत्नी कहा सुनी होने पर अपना रास्ता अलग कर लेती है इन बदलती हुई परिस्थितियों पर काका हाथरसी ने व्यंग्य किया है -

धर्म-कर्म और भक्ति, में नारी निष्ठावान,
पति से भी प्यारे लगें, पत्नी को भगवान।
पत्नी को भगवान, प्यार काकी का झूठा,
वह मंदिर गई, दिखाकर हमें अँगूठा।
बदला गया युग आज, होश में आओ लाला,
खारिज हुआ मुकदमा, पति परमेश्वर वाला। 207

भारतीय समाज में परिवारों में रहन-सहन भारतीय संस्कृति सब कुछ बदलता

जा रहा है। पहले समय में पत्नी, पति की हर आज्ञा का पालन करती थी। पति को परमेश्वर मानती थी। परन्तु आज की पत्नी पति की इज्ज़त करना भूल गयी है। आधुनिक युग के परिवारों में सांस्कृतिक मूल्यों के पतन को देखकर काका हाथरसी ने व्यंग्य लिखा है-

डैडी, आप यह जानकर
होंगे मुझसे सम्मत
आपकी बहू रोजना
करने लगी है मेरी मरम्मत।
छोटे भाई रमेश की वाइफ
इतनी निकली स्मार्ट,
रमेश को पीट-पीटकर
बना लिया है एकचार्ट,
पत्नियों से पिटने वालो की
प्रतियोगिता होगी।
शील्ड उसी को मिलेगी
जिस परिवार में पिटने वाले
पतियों की संख्या
सबसे अधिक होगी।
और वे चालू है गई, फोटोग्राफर जी पहले से ही
मोर्चे पर डटे भए है, छोरा कूँ फोटो भेजकर
मन ऐसो खुश भयौ, मानो चढ़ी उमीर में
फिर ते छोरा भयौ। 208

आधुनिक युग में परिवारों में भारतीय संस्कृत का कोई महत्व नहीं रह गया है। पहले के समय में स्त्री-पुरुष विवाह के बंधन में बँध कर जीवन भर एक दूसरे का साथ निभाते थे। परन्तु आज पाश्चात्य संस्कृति के प्रभाव ने सब कुछ बदल दिया है। पति-पत्नी का जीवन भर साथ रहने का कोई बन्धन नहीं रहा है। समाज की इन बदलती हुई विपरीत परिस्थितियों पर काका हाथरसी ने व्यंग्य किया है -

आज एक कल दूसरा,
चेंज कीजिए यार,

नित्य नई दे ताजगी, ताजा-ताजा प्यारा। 209

आधुनिक युग की पत्नी किसी के दबाव में रहना नहीं चाहती है। वह अपने पति को आज्ञाकारी बनाना चाहती है। अस बदलती हुई संस्कृति पर काका हाथरसी ने व्यंग्य द्वारा कटाक्ष किया है -

आज्ञाकारी पति मिले
काम करे अर्जट,
फिफ्टी-फिफ्टी पति रहे, फिफ्टी हो सर्वेट। 210

आधुनिक युग में परिवारों में सांस्कृतिक मूल्यों का विघटन तीव्र गति से हो रहा है। आज की पत्नी ज्यादा पढ़-लिखकर अपने कर्तव्यों को भूल गयी है और अपने पति की सेवा करने की बजाय अपनी सेवा करवाना चाहती है। इस बदलती परिस्थितियों पर काका हाथरसी ने व्यंग्य लिखा है -

आप मैट्रिक फेल हैं,
बीबी बी.ए. पास,
उनकी साड़ी धोइए, बनकर पत्नी दास। 211

आधुनिक युग की नारी की बदलती हुई संस्कृति पर काका हाथरसी ने व्यंग्य किया है। पाश्चात्य संस्कृति के प्रभाव के कारण आज की पत्नी अपने कर्तव्यों को भूल गयी है। पहले की पत्नी पतिव्रता कही जाती थी। परन्तु आज तो इसका कोई नाम-निशान नहीं है।

पति बेचारा ब्रत करें,
आप ठूँसकर खाय,
यही पतिव्रता नारि है, जो पति पर छा जाय। 212

आज के भौतिकवादी युग में आपसी सम्बन्धों में त्याग, प्रेम, कर्तव्यपरायणता आदि मूल्यों का विघटन होता जा रहा है। आधुनिक युग की पीढ़ी परिवारों में बुजुर्गों का सम्मान करना भूल गयी है पाश्चात्य संस्कृति के रंग में रंगकर अपने को ज्यादा योग्य मानने लगी है और अपने बुजुर्गों को अपने अनुसार चलाने को विवश करती है। इस बदलते हुए वातावरण पर काका हाथरसी ने व्यंग्य द्रष्टव्य किया है -

अधिक उम्र हो जाय तो, बूढ़ा होय दिमाग,
खुल्ल-खुल्ल बाबा करें, गायँ बेसुरे राग।
गायँ बेसुरे राग, नई लाइट के लड़के,

देख नया माहौल, तबीयत उनकी फड़के।
बहुत हो चुका, अब मत अपनी मूंछे तानों,
चाहों अपनी खैर, हुकुम बच्चों का मानो। 213

आधुनिक युग के परिवारों में पाश्चात्य संस्कृति के प्रभाव से पति-पत्नी के सम्बन्धों में बदलाव आ गया है। आधुनिक युग में पति-पत्नी को समान अधिकार होने पर पत्नी अपने कर्तव्य को भूलकर पति का सम्मान करना भूल गयी है। इस पर काका हाथरसी ने कटाक्ष किया है :

पढ़ी नहीं जिस पर कभी, पत्नी की फटकार,
उस भौदू भरतार को, लाख बार धिक्कार।
लाख बार धिक्कार, न हाहाकार कीजिए,
तिरस्कार दुतकार, सभी का स्वाद लीजिए।
बहिस्कार कर दे, तो भी हिम्मत हारो,
वे मारें फुंसकर आप उनको पुचकारो। 214

काका हाथरसी ने आधुनिक युग के परिवारों की बदलती हुई संस्कृति पर व्यंग्य किया है। आज की युवा पीढ़ी बहू-बेटियाँ अपने बुजुर्गों का सम्मान करना भूल गयी है। आधुनिक युग के परिवारों में सांस्कृतिक मूल्यों का पतन होता जा रहा है।

अरे बूढ़ापे बावरे, तू क्या देखै मोहि?
पुनर्जन्म यौवन मिले, तब देखूगाँ तोहि।
तब देखूँगा तोहि, उपेक्षा करते चाकर,
उत्तर देती बहु-बेटियाँ, मुँह मटकाकर।
बैठक में बाबा, बच्चों को खिला रहे हैं,
कुत्ता-बिल्ली को डंडा दिखा रहे हैं। 215

काका हाथरसी ने आधनिक युग के पति-पत्नी के सम्बन्धों में जो तकराव आ गाय है उस पर व्यंग्य द्वारा कटाक्ष किया है। आधुनिक युग की पत्नी अपने पति का मान-सम्मान करना भूल गयी है -

साबून से साड़ी धोता हूँ। यदि
मैली कुछ रह जाती है,
तुमसे तो धोबी अच्छा है
यह कहकर डाँट लगाती है।

धुक-धुक चलता दिल का पंखा,
मुहँ से दे जाता झाग, सखें। क्या चमका मेरा भाग, सखें। 216

आज की युवा पीढ़ी अपनी भारतीय संस्कृति को भूल गयी है। बड़ों का सम्मान आपसी प्रेम, व्यवहार आज के परिवारों में मिलना मुश्किल हो गया है आधुनिक युग में तो भौतिकता और आर्थिक विषमताओं से परिवारों में तनाव देखने को ही मिलता है। इन परिवर्तनों से जीवन मूल्यों में परिवर्तन होते जा रहे है काका हाथरसी ने इस पर व्यंग्य किया है -

घरवालों पर लादते, अनुचित धौंसदबाव,
प्रेम भावना नष्ट हो, दिन-दिन बढ़े तनाव। 217

भारतीय समाज में पहले पौराणिक प्रथा के अनुसार पुरुष शासन चलता था। सभी कार्यो को पुरुष सम्भालते थे। परन्तु आधुनिक युग में नारी शासन चल रहा है। समाज में किसी भी क्षेत्र में नारी पुरुषों से पीछे नहीं रहना चाहती है। इसके साथ ही नारी की मानसिकता में पाश्चात्य संस्कृति का प्रभाव पड़ा और भारतीय संस्कृति लुप्त हो गयी है। इस विषय पर काका हाथरसी ने व्यंग्य किया है -

नारी शासन चल रहा, यह मत जाना भूल,
बिगड़ जाय हुलियाँ मियाँ, चले अगर प्रतिकूल।
चले अगर प्रतिकूल, समझती हमें निठल्लू।
सखियों से कहती, हम लक्ष्मी वे हैं उल्लू।
काका कवि शंकित, बजती काकी का डंका,
बिजली के संकट में झलते उनको पंखा। 218

आधुनिक युग में पति और पत्नी को समानता का दर्जा दिया गया। परन्तु आधुनिक पत्नी अपनी संस्कृति और सभ्यता को भूल बैठी है। आज की पत्नी पूर्णतः स्वतन्त्रता चाहती है। आज पतियों को पत्नी की आज्ञा के अनुसार चलना पड़ता है। समाज के सांस्कृतिक मूल्यों के पतन को देखकर काका हाथरसी ने व्यंग्य किया है

पत्नी क्लब में जाये तो घर पर रहिए आप,
बैठक में बैठे रहो, प्रहरी बन चुपचाप
प्रहरी बन चुपचाप, बोरियत दूर भगाओ,
मुन्ना मुन्नी गोद खिलाओ, दूध पिलाओ।
पति बनकर फँस गए, निभेगी कैसे लाइफ,

नाइक से भी तेज नई लाइट की वाइफ। 219

आधुनिक परिवारों में पाश्चात्य संस्कृति का रंग चढ़ गया है। पहले पिता पुत्र के सम्बन्धों में पवित्रता, निःस्वार्थता, प्रेम और भक्ति की सुगंध आती थी, परन्तु आज के भौतिक समृद्धि चमक-धमक में स्वार्थवादिता, दोषपूर्ण शिक्षा, पाश्चात्य-सभ्यता के बढ़ते हुए दुष्प्रभाव के कारण बढ़ती जा रही है। आज की युवा पीढ़ी माता-पिता के प्रति कर्तव्यों को भूल गयी है। समाज के सांस्कृतिक मूल्यों के पतन को देखकर काका हाथरसी ने व्यंग्य पँक्तियाँ द्रष्टव्य की है।

जब तक घर में, धन सम्पति हो,
बने रहे प्रिय आज्ञाकारी,
पढ़ो-लिखो शादी करवा लो,
फिर मानो यह बात हमारी,
माता-पिता से काट कनैक्शन
अपना दड़बा अलग बसाओं।
खत्म हो गई उनकी ड्यूटी,
तुम भी कुछ व्यूटी दिखलाओ। 220

भारत में स्वतंत्रता से पूर्व पिता-पुत्र के रिश्ते आपसी प्रेम, सम्मान, निस्वार्थता पर टिके थे। परन्तु आज की युवा पीढ़ी पाश्चात्य संस्कृति के प्रभाव से स्वार्थी बन गयी है। आज के पुत्र अपने पिता का साथ सिर्फ अपना स्वार्थ सिद्द होने तक रखते है, फिर पिता बोझ लगने लगता है। आज के परिवारों में मूल्य पतन पर काका हाथरसी ने व्यंग्य लिखा है -

करो प्रार्थना हे प्रभु! हमको,
पैसे की है, सख्त जरुरत।
अर्थ-समस्या हल हो जायें,
शीघ्र निकालो ऐसी सूरत।
साठ वर्ष के हुए पिताजी,
और व्यर्थ है जीना उनका।
लपक रही है जीभ हमारी,
एक लाख का बीमा उनका।
मारो भगवान ऐसा घिस्सा

हो समाप्त जल्दी यह किस्सा।
जितनी रकम मिलेगी, उसमें
वन परसैन्ट आपका हिस्सा।
भगवान! हो जायेगे राजी,
शंका तनिक न मन में लाओ।
कुछ तो स्टैण्डर्ड बनाओ। 221

आधुनिक युग में बदलते हुए सामाजिक परिवेश में मूल्यों में अत्यधिक बदलाव आ गया है। भौतिकता, आर्थिक विषमता से पारिवारिक रिश्तों की धुरी चरमरा गई है। आज समाज में सांस्कृतिक मूल्यों का पतन तीव्र गति से हो रहा है। इन बदलती परिस्थितियों पर कवि कृष्ण गोपाल विद्यार्थी ने व्यंग्य किया है -

सारी दुनिया पर पड़ा, कलयुग का प्रभाव,
रिश्ते भी है आजकल, जैसे रिसते घाव।
जैसे रिसते घाव, नाव में छेद दीखता,
तभी तो भाई भाई में मतभेद दीखता।
भला चाहते हो तो अब यह रीत चलाओ.
सारे रिश्ते भूल सभी को दोस्त बनाओ। 222

आधुनिक युग के परिवारों में सांस्कृतिक मूल्य पतन तीव्र गति से हो रहा है, आज की युवा पीढ़ी अपने कर्तव्यों को भूल गयी है। माता-पिता अपने बच्चों को लायक बनाते है। आज वहीं माता-पिता बोझ बन गये है आज की पीढ़ी की इस वास्तविकता पर कवि कन्हैया लाल मत्त मे व्यंग्य पंक्तियाँ लिखी है-

बाप मे बेटे को पाला, गुल खिलाया प्यारने,
नौजवाँ होकर, दिखाया रंग वर खुरदारने।
हो गया घर से जुदा, शादी-शुदा, इनकम-शुदा,
बाप को दी रोटियां रबने, कफन सरकार ने। 223

आधुनिक युग में परिवारों में आपसी प्रेम, सद्भावनायें त्याग, सेवाभाव, भारतीय संस्कृति आदि मूल्यों का विघटन होता जा रहा है। आज की पीढ़ी स्वार्थी प्रवृत्ति की हो गयी है। माता-पिता के प्रति कर्तव्यों को भूल गये है। समाज में आर्थिक विषमताओं के कारण व्यक्तिकी मनोवृत्ति भी बदल गयी है। आधुनिक युग के परिवारों में सांस्कृतिक मूल्य पतन पर अशोक चक्रधर मे व्यंग्य की अभिव्यक्ति की है-

बुड़ढ़ा है अब किसी काम का नहीं,
धक्का देकर बाहर निकालो।
कब तक बीमारी के नखरे सहो,
और तब तक सभालो।
लोग तो, ऐसा ही सोचते है अक्सर।
पर
सर जी, मेरा छः महीने का बच्चा बीमार है,
समझिये कि वक्त की मार है।
भटकता रहता हूँ जाने कहाँ-कहाँ जी।
उधर बेटा बीमार इधर पिताजी।
घर से निकलो तो बत्तरा, बत्तरा से मूलचंद
दुकान पे न बैठो, तो हिल जाए धंधे की कितली।
जाने कब, रास्ता काट गई बिल्ली।
आफते सब एक साथ आने के पड़ी हैं,
घर में सुबह-सुबह हम तीनों भाइयों की,
बहुएं आपस में लड़ी है।
बुढ़े की क्या है, वो तो एक दिन मरेगा,
पर बच्चे का, ख्याल नहीं करोगें,
तो आगे धंधा कौन करेगा?
अब बताओ सर जी
इन औरतो को कैसे समझाएं
इन्हें किस तरह बताएँ, कि जब हम छोटे रहे होगे,
तब हमें यही बुड़ढ़ा वैद हीकम को दिखाता होगा,
हर बीमारी में दवाई दिलाता होगा।
जैसी टीस अपने बेटे के लिए उठती है हमें,
एसी ही इसके भी उठती होगी,
आज ये हो गया रोगी।
बूढ़ा है और असक्त है,
जमाना तो स्वारथ का भक्त है।

पर सर जी
सबसे ऊपर तो भावना है।
जिन माँ-बाप ने हमें पाला है,
जिनकी वजह से, हमारी जिन्दगी में उजाला है।
उन्हें अंधेरे गड़ढ़े में कैसे छोड़ दे,
उनकी तरफ से मुहँ कैसे मोड़ लें? 224

आज के आधुनिक युग में परिवारों में पाश्चात्य संस्कृति का प्रभाव तीव्र गति से हो रहा है। रिश्तों में प्रेम सद्भावना, व्यक्ति की वास्तविकता समाप्त हो गयी है। आधुनिकता के नाम पर परिवार के रागात्मक सम्बन्धों में जो बिखराव आया है, उससे परमेश्वर गोयल मे व्यंग्य किया है -

पति पीकर मित्रों में मस्त है,
पत्नी प्रेमी की बाँहो में व्यस्त है।
बच्चे आया की गोद में पलते हैं।
रिश्ते आधुनिक यों ही चलते हैं। 225

आधुनिक युग में परिवारों में अनेंक विद्रूपताओं का समावेश हो गया है। आज की पीढ़ी पाश्च्यात्य संस्कृति से प्रभावित होकर, परिवार में बड़ों का सम्मान करना भूल गीय है। आज के पुत्र स्वतन्त्रता से रहना चाहते है। परिवारों के बदलते हुए परिवेश पर डॉ. परमेश्वर गोयल ने व्यंग्य लिखा है -

अब युवा वर्ग को
प्रतिबन्ध पारिवारिक
कहाँ पसन्द हैं?
पुत्र लगामहीन,
बहू स्वचन्छन्द हैं। 226

पारिवारिक विघटन :-

आज आधुनिक परिवारों में प्रेम, सद्व्यवहार, त्याग की कमी आती जा रही है। संयुक्त परिवार विघटित होते जा रहे है और आज के इन छोटे-छोटे परिवारों में भी आपसी प्रेम नहीं रहा है। इसका कारण भौतिकता और आर्थिक विषमता भी है। आधुनिक युग में पति-पत्नि के सम्बन्धों में भी कहुआहट आ गयी है आज की इन बदलती हुई परिस्थितियों पर डॉ. किशोर काबरा ने व्यंग्य लिखा है-

अँगडाई ले खाट पर मैने पटके पैर,
बोला, मुझसे ले रहीं, किन जन्मों का बैर।
किन जन्मों का पैर, थका माँदा लौटा हूँ,
हुकुम दे रही, मानो मै तुमसे छोटा हूँ।
कह 'किशोर' बस सुनते-सुनते जीवन बीता,
मैं हूँ नन्दकिशोर, और तुम भगवतगीता।

* * *

गंगा जल भर आँक में, उसने बदला रंग,
फूटा मेरा भाग्य जो, मिला तुम्हारा संग।
मिला तुम्हारा संग, कहूँ अब किससे दुखड़ा।
दरवाजे पर पड़ी हुई हूँ, खाकर टुकड़ा।
कह किशोर बस, भोग लिया अब बनते योगी,
इसी भोग ने बना दिया है मुझको रोगी। 227

आधुनिक युग में परिवारों में अधिक अव्यवस्था फैलती जा रही है। पारिवारिक सदस्यों की मानसिकता बदलने से आपस में लड़ाई-झगड़े होने लगे है। सास-बहुओं को अलग घर का समझती है। जिससे आपस में लड़ाई-झगड़े होते है। जो आज के परिवारों के विघटन का कारण है। इस विषय पर आदित्य शर्मा ने व्यंग्य पंक्तियाँ लिखी है -

सास ने लिपिस्टिक खूब लगाई, कैसा नया जमाना आया।
बहू ने मांगी करी पिटाई, कैसा नया जमाना आया।
बेटी जाये सिनेमा देखे, कोई नहीं परेशानी।
बहु जाये तो करे लड़ाई, कैसा नया जमाना आया। 228

आधुनिक युग में समाज में भौतिकता और आर्थिक विषमतायें बढ़ती जा रही है। आज के व्यक्ति के लिए आपसी, प्रेम, त्याग, ईमानदारी से बड़ा पैसा है। पैसों के आगे अपने कर्तव्य भूल गये है और आज के परिवारों में फूट बढ़ती जा रही है। सभी रिश्ते स्वार्थ के हो गये है। इस संदर्भ में शैल चतुर्वेदी ने व्यंग्य लिखा है।

जब कोई सास दहेज के लिये
बहू को दोषी ठहराये
और बेटा माँ की हाँ मै हाँ मिलाये

तो समझो, बहू का जीना दुश्वार है
और यह कमीशियल बलात्कार है। 229

आधुनिक युग में समाज में भौतिकता का अधिक समावेश हो गया है। आज का व्यक्ति सफलता में ऊँचे शिखर पर पहुँच गया है। और उसमें व्यवहारिकता समाप्त होती जा रही है। समाज में परिवारों में आपसी प्रेम, व्यवहार समाप्त हो गया है। इस युग में संयुक्त परिवारों को ढूंढ़ना मुश्किल हो गया है इस वास्तविकता पर शरद जायसवाल ने व्यंग्य पंक्तियाँ प्रस्तुत की है -

खुद के अविष्कार मानव के
कदमों को पकड़ रहे हैं
इसांन स्वार्थ की लताओं में लिपटकर
सफलता के ऊँचे शिखर पर चढ़ रहे हैं-
जिनकी उँगलियों को थामकर हमने
चलना सीखा था आज वे ही
सत्ता पाने को तरस रहे हैं
तंगहाली और तानों के तीर
उन पर बरस रहे हैं-
संयुक्त परिवार अतीत के
भवँर में खो गए
आज परिवार में हाल के कमरे हो गये। 230

*

अध्याय -5

संदर्भग्रन्थ-सूचि

1. साठोत्तरी हिन्दी समाज में सामाजिक बोध, डॉ. मधु खराटे। पृ. 27
2. काका हाथरीस अभिनन्दन ग्रन्थ। पृ. 86
3. काका हाथरसी एक समीक्षा यात्रा डॉ. मिथिलेश। पृ. 30
4. काका की फुलझडियाँ काका हाथरसी । पृ. 25
5. काका की फुलझड़िया, पृ. 45
6. काका की फुलझड़िया, पृ. 52
7. जय बोले बेईमान की काका हाथरसी। पृ. 33
8. काका की महफिल पृ। 130
9. काका की चौपाल काका हाथरसी। पृ. 39
10. काका की चौपाल काका हाथरसी। पृ. 62
11. काका की चौपाल काका हाथरसी। पृ. 63
12. लोकप्रिय हास्य-व्यंग्य कविताएं अशोक अंजुम। पृ. 51
13. हँसता खिलखिलाता हास्य-कवि सम्मेलन प्रेम किशोर पटाखा। पृ. 72
14. काका की फुलझडियॉ, काका हाथरसी. पृ. 25
15. काका की फुलझडियॉ, काका हाथरसी. पृ. 25
16. जय बोले बेईमान की, काका हाथरसी। पृ. 81
17. काका की महफिल, पृ. 127
18. काका की चौपाल, पृ. 16
19. काका की चौपाल, पृ. 39
20. काका की चौपाल, पृ. 102
21. काका की तरंग काका हाथरसी पृ. 19
22. काका की तरंग काका हाथरसी पृ. 51
23. लूटनीति मंथन करी, पृ. 11
24. लूटनीति मंथन करी, पृ. 83
25. लूटनीति मंथन करी, पृ. 83
26. हास्य के गुब्बारे काका हाथरसी , पृ. 29
27. हास्य के गुब्बारे काका हाथरसी , पृ. 118
28. काका काकी की नोक-झोंक, काका हाथरसी पृ. 82
29. काका काकी की नोक-झोंक, काका हाथरसी पृ 111
30. काका काकी की नोक-झोंक, काका हाथरसी पृ. 127
31. काका की फुलझड़ियां, पृ. 20
32 काका की फुलझड़ियां, पृ. 23
33. काका की फुलझडियां, पृ. 38
34. काका की फुलझडियां, पृ. 45
35. काका की महफिल, पृ. 34
36. काका की महफिल, पृ. 59
37. काका की तरंग, काका हाथरसी। पृ. 39
38. काका-काकी की नोक-झोंक, काका हाथरसी। पृ. 88
39. काका की चौपाल। पृ. 62
40. काका के कारतूस। पृ. 66

41. व्यंग्य के पुरोधा डॉ. परमेश्वर गोयल। पृ. 197
42. हास्य-व्यंग्य भारती अक्टूबर-मार्च2001 पृ. 9, डॉ. रामगोपाल सिंह
43. कलामे हकीम सम्राट। पृ. 15
44. कलामे हकीम सम्राट। पृ. 26
45. टुकडे-टुकडे सोच, जय कुमार रुसवा। पृ. 119
46. हास्य और व्यंग्य मधुप पाण्डेय के संग। पृ. 27
47. हास्य और व्यंग्य मधुप पाण्डेय के संग। पृ. 118
48. नेता चरित्रम् डॉ. रामप्रसाद मिश्र, पृ. 10
49. चेतन-चुटकी आदित्य शर्मा चेतन। पृ. 28
50. हास्य-विनोद काव्य कोश प्रेम किशोर पटाखा। पृ. 185
51. व्यंग्यमेव जयते, योगेन्द्र मौद्गिल पृ. 46-47
52. क्या हम समझते नहीं है आशाकरण अटल। पृ 11-12-17
53. क्या हम समझते नही है आशाकरण अटल। पृ. 97-98
54. श्रेष्ठ हास्य-व्यंग्य रचनाएं काका हाथरसी गिरिराजशरण, पृ. 15-16
55. 1991की श्रेष्ठ हास्य-व्यंग्य रचनायें डॉ. गिरिराजशरण, पृ. 85
56. 1994 की श्रेष्ठ हास्य-व्यंग्य रचनायें डॉ. गिरिराजशरण, पृ. 61
57. व्यंग्यमेव जयते, योगेन्द्र मौद्गिल। पृ. 14
58. श्रेष्ठ-हास्य-व्यंग्य कविताएँ काका हाथरसी गिरिराजशरण। पृ. 134
59. श्रेष्ठ-हास्य-व्यंग्य कविताएँ काका हाथरसी गिरिराजशरण। पृ. 179-180-181
60. खुल्लम-खुल्ला असोक अंजूम। पृ. 88-89
61. खुल्लम-खुल्ला असोक अंजूम। पृ. 88-89
62. 1988 की श्रेष्ठ हास्य-व्यंग्य रचनाएं डॉ. गिरिराजशरण पृ. 7
63. 1993 की श्रेष्ठ हास्य-व्यंग्य रचनाएं डॉ. गिरिराजशरण. पृ. 55
64. 1994 की श्रेष्ठ हास्य-व्यंग्य रचनाएं डॉ. गिरिराजशरण. पृ. 86
65. यार सप्तक काका हाथरसी, पृ. 59
66. काका की चौपाल, काका हाथरसी पृ. 49
67. काका की महफिल काका हाथरसी पृ. 25
68. लूटनीति मंथन करी, काका हाथरसी, पृ. 19
69. लूटनीति मंथन करी, काका हाथरसी, पृ. 128
70 रंग चकतलस, असीम चेतन अंक-2, 1991 अप्रैल-जून, पृ. 27
71. रंग चकतलस, असीम चेतन अंक-2, 1991 अप्रैल-जून, पृ. 61
72. रंग चकतलस, असीम चेतन अंक-2, 1993 जुलाई-सितंम्बर, पृ. 23
73 रंग चकतलस, असीम चेतन अंक-2, 1995 अप्रैल-जून, पृ. 45
74. कलामें हकीम लेफ्टीनेट सम्राट। पृ. 12
75. कलामें हकीम सम्राट। पृ. 23
76. व्यंग्य तरंग, दिसम्बर 2003, सरोज श्रीवास्वत, पृ. 29
77. टुकडे-टुकडे सोच, जय कुमार रुसना, पृ. 26
78. दादा की रेल यात्रा, डॉ. श्री राम ठाकुरदादा। पृ. 24
79 लाशेखिलखिलाती है। धूमकेतु, पृ. 90
80. नेता चरित्रम् डॉ. राम प्रसाद मिश्र, पृ. 68
81. चेतन-चुटकी आदित्य शर्मा चेतन, पृ. 177
82. हँसों बत्तीसी फाड के(हास्यकवि सम्मेलन) प्रेम किशोर पटाखा। पृ. 14
83. हँसों बत्तीसी फाड़ के(हास्यकवि सम्मेलन) प्रेम किशोर पटाखा। पृ. 15-16
84. कलम दंश, यौगेन्द्र मौद्गिल, जनवरी-मार्च 2005, पृ. 13

85. कलम दंश, यौगेन्द्र मौद्गिल, जनवरी-मार्च 2005, पृ. 14
86. अब तो आँसू पोठ अल्हड़ बिकानेरी पृ. 17
87. अब तो आँसू पोठ अल्हड बिकानेरी पृ. 29
88. काका हाथरसी काका के कारतूस, पृ. 25
89. लूटनीति मंथन करी, काका हाथरसी पृ. 129
90. यार सप्तक काका हाथरसी पृ. 90
91. काका की फुलझड़ियां, काका हाथरसी। पृ. 51
92. काक की चौपाल, काका हाथरसी। पृ. 36
93. काक की चौपाल, काका हाथरसी। पृ. 107
94. काक की चौपाल, काका हाथरसी। पृ. 134
95. 1991 की श्रेष्ठ हास्य-व्यंग्य रचनाएं, डॉ. गिरिराजशरण । पृ. 5,6,7
96. 1991 की श्रेष्ठ हास्य-व्यंग्य रचनाएं, डॉ. गिरिराजशरण। पृ. 85-86-87-88-91.
97. भोले-भाले अशोक चक्रधर, पृ. 40
98. मज़ा मिलेनियम पं. शुरेश नीरव, पृ. 21
99. हास्य-व्यंग्य के विविध रंग डॉ. बरसाने लाल चतुर्वेदी। पृ. 73
100. लूव्हास्य-व्यंग्य के विविध रंग डॉ. बरसाने लाल चतुर्वेदी। पृ 91-92-95-96
101. कलामे हकीम ले. सम्राट, पृ. 17
102. चुनी-चुनाई अशोक चक्रधर। पृ 94-95-96-97-98-99
103. पेंट में दाढियाँ है सूर्य कुमार पाण्डेय। पृ. 86-87
104. धूर्त दर्पण, धूर्त बनारसी, पृ. 10-11
105. चेतन-चुटकी आदित्य शर्मा चेतन पृ. 132
106. हँसी आती है शैल चतुर्वेदी, पृ. 71
107. हँसो बत्तीसी फाड के अशोक अंजुम पृ. 11
108. पत्रिका नई-गुदगुदी, जनवरी-फरवरी, मार्च 2003 , विश्वम्भर मोदी, पृ. 21
109. पेंट में दाढियां है सूर्य कुमार पाण्डेय पृ. 39-40-41-42-47-48
110. हास्य-व्यंग्य भारती डॉ. रामगोपाल सिंह, पृ. 2
111 हास्य-व्यंग्य भारती डॉ. रामगोपाल सिंह, पृ. 8
112. हास्य-व्यंग्य भारती पृ. 8
113 कलामें हकीम सम्राट,पृ. 31
114. टुकड़े-टुकड़े सोच,जय कुमार रुसवा, पृ. 118
115. हास्य और व्यंग्य मधुप पांडेय के संग । पृ 23
116. अब तौ आंसू पोछ अल्हड बीकानेरी, पृ. 48
117. लूटनीति मंथन करी, काका हाथरसी
118. काका की चौपाल, काका हाथरसी, पृ. 43
119. लूटनीति मंथन करी काका हाथरसी, पृ. 28
120. जय बोलो बेईमान की, काका हाथरसी, पृ. 11
121. काका काकी की नोंक-झोक काका हाथरसी पृ.
122. लूटनीति मंथन करी, काका हाथरसी पृ.
123. काका की चौपाल, पृ. 13
124. काका की फुलझडियां, पृ. 113
125 हास्य-विनोद काव्य कोश पं. गोपाल प्रसाद व्यास, पृ. 192
126. हास्य-विनोद काव्य कोश पं. गोपाल प्रसाद व्यास, पृ. 409.410
127. व्यंग्यमेव जयते योगेन्द्र मौद्गिल पृ. 25-26
128. व्यंग्यमेव जयते योगेन्द्र मौद्गिल पृ. 43

129. 1993 की श्रेष्ठ हास्य-व्यंग्य रचनाएं डॉ. गिरिराजशरण पृ. 66
130. 1994 की श्रेष्ठ हास्य-व्यंग्य रचनाएं डॉ. गिरिराजशरण पृ. 65
131. अशोक चक्रधर के चुटपुटफुले पृ. 18-19
132. हास्य-व्यंग्य भारती अप्रैल-सितम्बर 2000 पृ 12, डॉ. रामगोपाल सिंह
133. हास्य-व्यंग्य भारती अप्रैल-सितम्बर 2001 पृ. 8-9, डॉ. रामगोपाल सिंह
134. हास्य-व्यंग्य भारती अप्रैल-सितम्बर 2001 पृ. 9, डॉ. रामगोपाल सिंह
135. अट्टहास दिसम्बर 2003, पृ. 20
136. सूख गये सबल ताल डॉ. गोपाल बाबू शर्मा पृ. 29
137. सूखं गये सब ताल डॉ. गोपाल बाबू शर्मा पृ. 30
138. टुकड़े-टुकड़े सो, जय कुमार रुसवा। पृ. 29
139. काका की महफिल, पृ. 33
140. काका की महफिल, पृ. 34
141. काका की महफिल, पृ. 59
142. काका की महफिल, पृ. 73-74
143. काका की महफिल, पृ. 138
144. काका की महफिल, पृ. 159
145. यार सप्तक काका हाथरसी पृ. 133-134
146. काका की तरंग, पृ. 26
147 काका की तरंग, पृ. 30
148. काका की तरंग, पृ. 80
149. काका की तरंग, पृ. 88
150. काका की तरंग, पृ. 94
151. जय बोलो बेईमान की, काका हाथरसी, पृ. 34
152. जय बोलो बेईमान की, काका हाथरसी, पृ. 53
153. काका की चौपाल, पृ. 75
154. काका की चौपाल, पृ. 111
155. काका के कारतूस, पृ. 142-143
156. काका की फुलझड़ियाँ, पृ. 118
157. काका की फुलझड़ियाँ, पृ. 101
158. काका की फुलझड़ियाँ, पृ. 142
159. काका की चौपाल पृ. 46
160. काका की महफिल पृ. 91
161. टूटा हुआ शहर डॉ. किशोर काबरा, पृ. 35-38
162. चेतन-चुटकी, आदित्य शर्मा चेतन, पृ. 68
163. हॅसो बत्तीसी फाड के (एक हास्य कवि सम्मेलन) प्रेम किशोर पटाखा पृ. 7-8
164. हास्य-विनोद काव्य कोश पं. गोपाल प3साद व्यास पृ. 216-217-218
165. व्यंग्यमेव जयते योगेन्द्र मौद्‌गिल पृ. 13
166. व्यंग्यमेव जयते योगेन्द्र मौद्‌गिल पृ. 13-14-15
167. व्यंग्यमेव जयते योगेन्द्र मौद्‌गिल पृ. 99
168. सात देवरों से होली सरला भटनागर. पृ. 14
169. भैसा पीवे सोमरस अल्हड बीकानेरी. पृ. 13
170. हंसी के रंग कवियों के संग प्रेम किशोर पटाखा, पृ. 31
171. कलमदंश योगेन्द्र मौद्‌गिल अप्रैल-जून 2005, पृ 7
172. जर्जर कश्ती अगस्त2005, पृ. 5 ज्ञानेन्द्र साज

173. दमदार और दुमदार दोहे हुल्लड मुरादाबादी पृ. 15-29
174. लोकप्रिय हास्य-व्यंग्य कविताएँ अशोक अंजुम पृ. 69
175. खुल्लम-खुल्ला अशोक अंजुम पृ. 147
176. 1990 की श्रेष्ठ हास्य-व्यंग्य कविताएँ डॉ. गिरिराजशरण पृ 12
177. अट्टहास्य दिसम्बर 2003, पृ. 20, शिल्पा श्रीवास्तव
178. समय का शंख नरेन्द्र मिश्र धड़खन पृ. 25
179. टुकड़े-टुकडे सोच, जय कुमार रुसवा. पृ.
180. मुर्दो का प्रीतिभोज, काशीपुरी कुंदन पृ. 29
181. काका की फुलझड़ियाँ पृ. 27-28-29
182. हास्य की गुब्बारे, काका हाथरसी, पृ. 53
183. हास्य की गुब्बारे, काका हाथरसी, पृ. 114
184 हास्य की गुब्बारे, काका हाथरसी, पृ. 139
185. हास्य की गुब्बारे, काका हाथरसी, पृ. 140
186. काका की चौपाल पृ. 75
187. काका की चौपाल पृ. 76
188. काका की चौपाल पृ. 143
189. काका की तंरग पृ. 35
190. काका की तंरग पृ. 63
191. काका की तरंग पृ. 88
192. काका की महफिल पृ. 146
193. हास्य के गुब्बारे काक़ा हाथरसी, पृ. 172
194. काका की चौपाल पृ. 19
195. काका की महफिल काका हाथरसी. पृ. 24
196. काका की महफिल काका हाथरसी. पृ. 28
197. काका की महफिल काका हाथरसी. पृ. 79
198. अब तो ऑसू पोछ अल्लड बीकानेरी
199. काका की महफिल पृ. 137
200. हास्य की गुब्बारे, काका हाथरसी पृ. 142
201. काका की महफिल पृ. 43
202. काका की फुलझडियॉ, पृ. 19
203. काका की फुलझड़ियाँ, पृ. 19
204. काका की महफिल, पृ. 139
205. काका की महफिल, पृ. 142
206. काका की महफिल, पृ. 142
207. काका की महफिल, पृ. 143
208. यार सप्तक पृ. 80-82
209. लूटनीति मंथन करी, काका हाथरसी पृ. 14
210. लूटनीति समंथन करी, पृ. 15
211. लूटनीति समंथन करी, पृ. 16
212. लूटनीति समंथन करी, पृ. 84
213. काका की तरंग पृ. 99
214 जय बोलो बेईमान की काका हाथरसी पृ. 34
215. जय बोलो बेईमान की काका हाथरसी पृ. 38
216. जय बोलो बेईमान की काका हाथरसी पृ. 143

217. काका की चौपाल, पृ. 132
218. काका के कारतूस, पृ. 41
219. काका के कारतूस, पृ. 41
220. काका के कारतूस, पृ. 60
221. काका के कारतूस, पृ. 61
222. व्यंग्यमेव जयते, योगेन्द्र मौद्गिल, पृ. 69
223. रंग चकल्लस अक्टूबर-सितम्बर 1995, पृ. 41
224. सोची-समजी अशोक चक्रधर पृ. 131-132
225. व्यंग्य के पुरोधा डॉ. परमेश्वर गोयल, डॉ. राम निवास मानव पृ. 197
226. व्यंग्य के पुरोधा डॉ. परमेश्वर गोयल पृ. 169
227. साले की कृपा डॉ. किशोर काबरा, पृ. 21
228. चेतन चुटकी, आदित्य शर्मा चेतन पृ. 30
229. हँसी आती है शैल चतुर्वेदी पृ. 40
230. नई गुदगुदी मई 2000 पृ. 13